निबंध

113

श्वेतांबर
तेरापंथ
मत समीक्षा

359

37

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परमगुरुशास्त्रविशारद-जैनाचार्यश्रीविजयधर्मसूरिभ्यो नमः।

श्वेताम्बर तेरापंथ-मत समीक्षा।

निबंध 399/2
113

लेखक

आचार्योपासक मुनिविद्याविजय।

प्रकाशक

हर्षचन्द्र भूराभाई शाह।

श्री "विद्या विजय" प्रिन्टिंग प्रेसमें शाह पुरुषोत्तमदास गीगाभाई पांचभायाने मुद्रित किया—भावनगर.

वीर सं० २४४०। सन् १९१४।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भूमिका ।

इस पुस्तकमें भूमिकाकी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि पुस्तकके उपक्रममें ही भूमिका योग्य वक्तव्य कह दिया है। तिसपर भी इस पुस्तककी रचनाके विषयमें एकाध वात, यहाँ कह देनी समुचित समझता हूँ।

यह नियम है कि–'कारणके सिवाय कार्यकी उत्पत्ति नहीं होती।' इस पुस्तकके निर्माणमें भी कुछ न कुछ कारण जरूर है।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें, 'मूर्तिपूजा' को नहीं माननेवालोंमें ढूंढिएकी प्रसिद्धि है, परन्तु तेरापंथ नामका भी एक मत है, ऐसा बहुत कम लोग जानते हैं। तेरापंथियोंकी प्रसिद्धि प्रायःकरके राजपूताना–मारवाडमें अधिक हैं। तेरापंथी साधुओंका अधिकतर विचरना वहाँ ही होता है, जहाँ हमारे संवेगी साधुओंका विचरना बहुत कम, बल्कि नहीं होता है। ऐसे क्षेत्रोंमें, हजारों भोले मनुष्य, उन साधुओंके उपरि आडंबरसे फँस जाते हैं। इस लिये मेरा कई दिनोंसे इरादा था कि–'तेरापंथी–मतके विषयमें एक पुस्तक लिखुं, और उन्होंने शास्त्रके विरूद्ध की हुई कल्पनाएं, तथा जिनागमके असल सिद्धान्त (दया–दान) को मूलसे उखाड दिया है, वगैरह उनके, दुर्गतिमें ले जानेवाले मन्तव्योंकी फोटु दुनियाको दिखलाऊं।' ऐसे विचारमें थाही, उतनेमें पाली–मारवाडमें, हमारे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परमपूज्य प्रातःस्मरणीय गुरुवर्य शास्त्रविशारद—जैनाचार्यश्रीविजयधर्मसूरीश्वरजीमहाराज, तथा इतिहासतत्त्वमहोदधि उपाध्यायजी श्रीइन्द्रविजयजी महाराजका पधारना हुआ, उस समय वहाँके तेरापंथियोंने आपसे चार दिन तक चर्चा की। अन्तमें वे लोग निरुत्तर होगये, तब उन्होंने तेईस प्रश्नोंका एक चिट्ठा दिया, और उनके उत्तर मांगे।

बस, इसी निमित्तको लेकरके, उनके तेईस प्रश्नोंके उत्तरके साथ, इस पुस्तकके निर्माण करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है।

इस पुस्तकमें तेरापंथी मतकी उत्पत्ति, उसके मन्तव्य देनेके बाद पालीकी चर्चाका वृत्तान्त तथा उनके पूछे हुए तेईस प्रश्नोंके उत्तर दिये गये हैं। और अन्तमें उन तेरापंथियोंसे ७५ प्रश्नके उत्तर उनके माने हुए ३२ सूत्रके मूल पाठसे मांगे हैं।

मैं आशा करता हूँ कि तेरापंथि मतके विषयमें, बिलकुल संक्षेपसे लिखी हुई इस पुस्तकको पढ करके, तेरापंथी तथा इतर महानुभाव भी लाभ उठावेंगे।

शिवगंज [एरणपुरा]
भाद्रपद सुदि १५ वीर सं. २४४०
ता—४ सप्टेम्बर सं. १९१४

आचार्योपासक
विद्याविजय.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

॥ अर्हम् ॥

श्रीविजयधर्मसूरिभ्यो नमः ।

श्वेताम्बर तेरापंथ--मत समीक्षा ।

पंचमकालका प्रभावही ऐसा है कि—ज्यों ज्यों काल जाता है, त्यों २ एक के पीछे एक, ऐसे मतमतान्तर बढते ही जाते हैं । पहिले महावीर देवकी पाट परम्परामें जो लोग चले आते थे, उन्होंमेंसे, वीर निर्वाण ६०९ वर्षके पश्चात् शिवभूति नामक मुनिने दिगम्बर मत चलाया । जिसने 'मूर्तिको नग्न मानना,' 'स्त्रीको मोक्ष न मानना' इत्यादि बातोंकी प्ररूपणाकी । इतना ही क्यों ? इसकी सिद्धिके लिये अङ्गादि शास्त्रोंको विच्छेद मानकरके अभिनव शास्त्र बनाए । इसके बाद १७०९ में, लोंका लेखकके चलाए हुए मतमेंसे लवजी ऋषिने ढुंढक पंथ (स्थानकवासी) निकाला । जिसने मूर्तिपूजन वगैरहका निषेध किया । इसकी सिद्धिके लिये, सूत्रोंमे जहाँ २ मूर्ति पूजाका अधिकार आया,उसके अर्थोंको बदलनेमें बहादुरीकी । तदनन्तर इसी ढुंढक पंथमेंसे एक 'तेरापंथी' मत निकला हुआ है । जिसकी समीक्षा करना, आजके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लेखका प्रधान उद्देश्य है। इस पुस्तकमें, पहिले तेरापंथ-मतकी उत्पत्ति,उसके मन्तव्य और अंतमें, पाली (मारवाड)में जो चर्चा हुई,उसका सारा वृत्तान्त तथा तेरापंथीके तेईस प्रश्नोंके उत्तर लिखे गये हैं। आशा है पाठक वर्ग इसको ध्यान पूर्वक पढेंगे।

तेरापंथ-मतकी उत्पत्ति ।

यह पंथ १८१८ की सालमें शुरु हुआ है। इसकी उत्पत्ति इस तरह हुईः—

"संवत् १८०८ की सालके लगभगमें मारवाडमें ढूंढक बाईस टोलेके, रुघनाथजी नामक साधु, अपने शिष्योंके साथ विचरते थे। इनके पासमें सोजत-बगडीके नजदिक कंटालीएके रहने वाले भिखुनजी नामक ओसवालने दीक्षा ली। किसी समयमें रुघनाथजी, मेडतेमें भिखुनजीको श्रीभगवती सूत्र पढाते थे। यद्यपि भिखुनजीकी बुद्धि कुछ तीक्ष्णथी, परन्तु विचारशक्ति उलटी होनेसे बहुतसी बातोंमें इन्हें विपरीतता मालूम होने लगी। इसकी चेष्टा सामतमल धारीवाल श्रावक जान गया। इस श्रावकने रुघनाथजीसे कहाः—'आप इसको भगवती सूत्र पढा रहे हैं, परन्तु यह तो 'पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम्' जैसा होता है। यह आगे जा करके निन्हव होगा। और उत्सूत्र प्ररूपणा करेगा।'

रुघनाथजीने कहाः—'पहिले भी श्रीवीरभगवानने गोशालेको बचाया है। जमालीको भी पढाया और निन्हव हुआ तो क्या किया जाय? अपने २ कर्मानुसार हुआ करता है। इसका भी कर्मानुसार जो भावि-होनहार होगा सा होही जायगा।'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस तरह कह करके उन्होंने भगवती तो पूरी कराई। चोमासेके समाप्त होनेपर भिखुनजी उस भगवतीजीके पुस्तकको ले करके चलने लगे। तब रुघनाथजीने कहाः-'पुस्तक छोडते जाओ।' परन्तु भिखुनजी तो लेकरके ही चले। पीछेसे दो साधुओंको भेज करके रुघनाथजीने वह पुस्तक मंगवा लिया। बस! इसीसे आपके हृदय मंदिरमें क्रोधाग्नि प्रज्वलित हुई और आपने यही निश्चय किया कि-'मैं नया मत निकालु और रुघनाथजीको कष्ट दूँ।' अस्तु!

आपने मेडतेसे विहार करके मेवाडमें आकर राजनगरमें चातुर्मास किया। यहाँपर सागर गच्छके यतिका एक भंडार था। उस भंडारमेंसे श्रावक लोग उसको, जो चाहिये, पुस्तकें देने लगे। परन्तु ठीक है। स्याद्वाद शैलीयुक्त, अनंतनयात्मक श्रीजिनवचनके सच्चे रहस्यको, समुद्र समान गंभीर बुद्धिवाला भी गुरुगमताके सिवाय, प्राप्त नहीं कर सकता है, तो भिखुनजी जैसे, अव्वल तो मूर्तिके उत्थापक, गुरुगमताका नाम निशान नहीं, और टब्बा-टब्बीसे काम लेनेवालेको, सच्चा रहस्य न मिले और वैपरीत्य पैदा हो, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं।

ठीक हुआ भी वैसाही। ज्यों २ भिखुनजी अपने आपसे पढता गया त्यों २ उसके ऊपर अनेक प्रकारकी शंकाएं और कुतर्क सवार होने लगे। अन्तमें अविधिसे सूत्र पढनेका प्रभाव, भिखुनजीके ऊपर बराबर पडा। भिखुनजीने पहिले इस दयाका ही शिरच्छेद किया, जो कि जिन शासनका प्रधान मंत्र है-जिन शासनका प्रधान उद्देश्य है। भिखुनजी ने इस प्रकारकी प्ररूपणा कीः—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'साधु-मुनिराज किसी त्रस-स्थावर जीवको हणे नहीं, हणावे नहीं और अन्य कोई हणे उसकी अनुमोदना करे नहीं। किसीने किसी जीवको बांधा हो, तो साधु छोडे नहीं, छोडावे नहीं, और छोडे उसको अच्छा जाने नहीं। यह साधुका आचार है। इसी तरह श्रावक भी तीर्थंकरके छोटे पुत्र हैं, इस लिये वे भी कोई कीसी जीवको मारता हो तो, उस जीवको छोडे नहीं, छोडावे नहीं और छोडे उसकी अनुमोदना करे नहीं। इसमें कारण यह दिखलाया कि-यदि कोई शख्स, किसी जीवको मारता हो, और उसको छोडाया जाय, तो प्रथम तो अंतराय दोष लगेगा। तथा छोडानेके बाद वह जीव हिंसा करेगा, मैथुन सेवेगा, पत्र-पुष्प-फल तोडेगा, भक्षण करेगा वगैरह सब पाप छोडानेवालेके शिर होता है। अर्थात् जैसे किसी बंडेमें गाय-बेल वगैरह भरे हुए हैं, और उसके पास अग्नि लगी हो, तो उस बंडेका दरवाजा खोल करके उन जानवरोंको बाहर नहीं निकालने चाहियें। क्योंकि-उनको निकालेंगे तो वे गाय-बेल वगैरह पशु मैथुन सेवेंगे-हिंसा करेंगे वह पाप दरवाजे खोलनेवालेके शिर पर है। इसके उपरान्त यह भी प्ररूपणाकी कि-साधुके सिवाय कोई संयति नहीं है। अतएव, सिवाय साधुके और किसीको देनेमें निर्जरा या पुण्य होता ही नहीं है।"

इस प्रकार भिखुनजीने दया और दानका निषेध किया।

इस प्ररूपणामें चार मनुष्य प्रधान थे। भीखुनजी तथा जयमलजीका चेला बखताजी, ये दो साधु तथा वच्छराज ओसवाल और लालजी पोरवाल, ये दो गृहस्थ। इन चारोंने मिल करके यह प्ररूपणाकी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चातुर्मास उतरनेके बाद भीखुनजी, अपने गुरु रुघनाथजीके पास सोजत आए। रुघनाथजी पहिलेहीसे जान गए थे कि-इसने ऐसी प्ररूपणाकी है। इस लिये उसका कुछ सत्कार नहीं किया। आहार भी साथ नहीं किया। तब भीखुनजीने अपने गुरुसे कहाः-मेरा क्या अपराध है? रुघनाथजीने कहाः-तुमने उत्सूत्रप्ररूपणाकी, रुघनाथजीने उसको समझाया किः 'यह तुम्हारी कल्पना, बिलकुल शास्त्र और व्यवहार दोनोंमे विरुद्ध है। यदि ऐसा ही हो तो धर्मके मूल अंगभूत दया और दान दोनों खंडित क्या? सर्वथा ऊठ जायेंगे। और जब ये दोनों उठ गए तो फिर मोक्ष मार्गका अभाव ही हो जायगा। अन्तमें क्रमशः सर्वथा नास्तिकताकी नोबत आ जायगी। अत एव तुमने जो अरिहंतोंके अभिप्रायसे विरुद्ध प्ररूपणाकी है, उसका प्रायश्चित्त लेलो और आयंदे ऐसा न हो, ऐसा निश्चय करो।'

भिखुनजीके अन्तःकरणमें इस बातका जरा भी असर न पहूँची, परन्तु इसने अपने मनमें विचार कियाः-'यदि इस वख्त मैं अपने मानसिक विचार प्रकट कर दूँगा तो ये गुरुजी मुझे समुदायसें बाहर निकाल देंगे। और अभी मैं बाहर हो करके अपना टोला नहीं जमा सकता हूँ। क्योंकि-अभी मेरे पास वैसे सहायक नहीं हैं, जैसे चाहिये। अत एव अभी तो गुरुजी जो कुछ कहें, स्वीकार ही कर लेना उचित है'। ऐसा विचार करके दंभ-पिय भिखुनजीने कहा-'हे स्वामिन्! मेरी भूल आपने कही इससे मैं क्षमापात्र हूँ। आप जो कुछ प्रायश्चित्त दें, मैं लेनेके लिये तय्यार हूँ'। गुरुने छमासी प्रायश्चित्त दिया। (किसी २ जगह दो दफे प्रायश्चित्त लेना लिखा है) यह सब

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुआ, परन्तु भिखुनजीके चेले भारमलने श्रद्धा हटाई नहीं। पश्चात् रुघनाथजीने भिखुनजीसे कहाः-

'बगड़ीमें वखताजी ढूंढीये, वच्छराजजी ओसवाल, राजनगरके श्रावक लालजी पोरवाड, इन तीनोंकी तुमने श्रद्धा हटाई है, इस लिये तुम वहाँ जाकरके ठीकाने लाओ। उन लोगोंको तुम ही समझा सकोगे, वहाँसे आप आज्ञा लेकरके बगडी आए। यहँपर तो आपको 'लेने गई पूत तो खोआई खसम' जैसा हुआ। आएथे तो वखते ढूंढकको समझाने। परन्तु प्रत्युत वखता ढूंढीया आपहीको उपालम्भ (ठपका) देने लगा। वखता ढूंढकने कहाः-'देखो! अपने सबने मिल करके यह ठीक कियाथा, और फिर तुम तो रुघनाथजीके पास जाकरके फँस गए। यह क्या किया?' बस! ऐसे २ बहुतसे वचन सुना करके फिर चक्कर घुमाया। फिर दो चार महीने बाद भिखुनजी रुघनाथजीके पास आए। फिर भी आहार पाणी साथ नहीं किया। तब रुघनाथजीके भाई जेमलजीके पास भिखुनजी गए। जेमलजीको और रुघनाजीको द्वेष हुआ। छे महीने तक पंचायत होती रही। किन्तु अपना मत नहीं छोडा। भिखुनजीने अंदर अंदरसे साधुओंको और गृहस्थोंको अपने पक्षमें ले लिये थे। रुघनाथजीने प्रायश्चित्त लेकरके समुदायमें रहेनेको बहुत कुछ कहा। परन्तु अब वह कैसे मान सकताथा। क्योंकि उसके पक्षमें और भी लोग मिल गये थे। रुघनाथजीने बहुत कुछ समझाया, परन्तु नहीं समझा, तब 'बिगडा पान बिगाडे चोली, बिगडा साधु बिगाडे टोली' इस नियमानुसार रुघनाथजीने उसको सं० १८१५ चैत्र शुदि ९ शुक्रवारके दिन समुदायसे बाहर किया। (किसी २ जगह १८१८ लिखा है)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भीखुनजी जब समुदायसे बाहर हुए तब वे वखतावर, रूपचन्द भारमल, गिरधर वगैरह बारह और, वह मिलकर, तेरह आदमी निकले थे। बस! इसीसें 'तेरापंथ' ऐसा नाम पडा है। सुनते हैं रूपचन्द आदि दो साधु तो किसी कारणसे थोडे ही समयमें भिखुनजीको छोड कर, रुघनाथजीको मिल गये थे।"

बस। इस प्रकारसे 'तेरापंथ' की उत्पत्ति हुई है।

अब भिखुनजी ग्रामानुग्राम विचरने लगा। और खुल्ले-खुल्ला दया-दानका निषेध करने लगा। बहुतसे पंडित लोग उससे शास्त्रार्थ करके उसको पराजय करते थे। परन्तु गाढ मिथ्यात्वके प्रभावसे वह कैसे मान सकता था?। उसके अभिनिवेश-मिथ्यात्वरूप भूमि गृहमें पंडितोंके-विद्वानोंके वचनरूप किरणें घुसने नहीं पाती थीं। जब भिखुनजी शास्त्रार्थमें किसीसे हार जाता था, तब वह कहता था:-'मेरी बुद्धिकी न्यूनतासे मैं पराजय होता हूं। परन्तु बात तो जो मैं कहता हूं वही सत्य है'। बस! ऐसी २ बातें करके अपने हठवादको नहीं छोडता था।

प्रियपाठक! तेरापंथके मूल उत्पादक भिखुनजीके दादे परदादे लोग सूत्रमेंसे 'मूर्त्ति' विषयक जो २ रकमेंथी उसकी तो चोरी करही चुके थे। अब भिखुनजीने मूल दो और बातोंका फेरफार किया। यह तो सब कोई समझ सकते हैं कि-वहीमेंसे एक दो रकमकी चोरी कोई करना चाहे तो उसको बहुत रकमोंका फेरफार करना पडता हैं। बस! इसी नियमानुसार दया और दान ये दो रकमें उडानेमें और कौन २ बातोंमें फेरफार करना पडा, तथा उसकी सिद्धिके लिये उसको कैसे २ मन्तव्य प्रकट करने पडे यह बात आगे चलकरके आप पढेंगे।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तेरापंथ-मतके मन्तव्य ।

तेरापंथियोंने ऐसे २ मन्तव्य प्रकाशित किये हैं, जिनको सुन करके कैसाभी मनुष्य क्यों न हो, उनके प्रति सम्पूर्ण घृणाकी दृष्टिसे देखे विना नहीं रहेगा । बातभी ठीक है, जिन्होंने दया और दान ये दो परमसिद्धान्तोंकाही शिर-च्छेद कर दिया है, वे लोग फिर क्या नहीं कर सकते हैं ? अस्तु ।

यहाँ पर उनके मन्तव्य दिखलाए जायँ, इसके पहिले एक और बात कह देना समुचित समझता हूं ।

तेरापंथ-मतके उत्पादक भिखुनजीने दया और दान दोनोंको जडसे उखाड डालदिये । तब उसके गुरु तथा और भी लोग समझातेथे कि-देखो, 'महावीर देवनेभी अनुकंपासे गोशालेको बचाया है' । जब उसकी एकभी न चली, तब 'महावीर देवभूले' ऐसा कहना पडा । अन्तमें यहाँ तक नौबत आई कि-महावीर देवके अवर्णवाद भी बोलने लग गया । उसको यहभी समझाया गया था कि-" तू जो उत्सूत्र भाषण करके अनुकंपाका निषेध करता है, वह बिलकुल बे सिर-पैरकी बात है । देखो, उपासगदशांगमें श्रेणिक राजाने अनुकंपाके कारण कसाईवाडेको लूँट लिया लिखा है । रायपसेणीसूत्रमें परदेशी राजाने १२ व्रतका उच्चारण किया, वहाँ परिग्रहप्रमाणका चतुर्थ हिस्सा अनुकम्पा (दानशाला व-गैरह)में लगाया । और भी देखो:-उत्तराध्ययन सूत्रमें श्री-नेमनाथ विवाहके निमित्त जब आए हैं, तब वहाँपर वाडेमें भरे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुए पशुओंको अनुकंपासे छुडवाये हैं। तथा ठाणांगसूत्रमें दश प्रकारका दान प्ररूपण किया है उसमें अनुकंपादान साफ २ प्रकट किया है।"

इत्यादि बहुत २ पाठ दिखा करके समझाया, परन्तु उसने अपने अभिनिवेशको बिलकुल त्याग नहीं किया। ठीक है जीवोंकी गति कर्मके अधीन है। और जैसी गति होती है वैसी मति भी होती है। तदनुसार भिखुनजीकी मति भी, उसकी गतिका परिचय कराने लगी। बस, परमात्माके शासनमें अनेकों निह्नव हुए, उन्होंमें इसका भी एक नम्बर बढ गया। परन्तु इसमें एक विशेषता थी। और सब निह्नवतो मूलपरंपरासे निकले, परन्तु यह तो निह्नवोंमेंसे निह्नव हुआ। अस्तु!

यह पहिलेही दिखला दिया है कि-भिखुनजीने मूल तो दो रकमों का फेरफार किया। दया और दान। परन्तु उन दो रकमोंके फेरफार करनेमें, उसको अनेकों मन्तव्य शास्त्र विरुद्ध प्रकाशित करने पडे। यहाँपर संक्षेपमें, उसके प्रकाशित मन्तव्य दिखलाये जाते हैं।

दयाके विषयमें.

१ भूखे-प्यासेको जिमानेमें, कबूतर वगैरह जीवोंको दाने डालनेमें तथा पानीकी पीयाऊ (पो) बनवानेमें एवं दानशाला करवानेमें एकान्त पाप होता है।

२ बिल्ली, मूसे [ऊंदर] को पकडती हो, और उसको छुडाया जाय,तो भोगान्तराय लगे। इसी तरह और भी कोइ हिंसक जीव, कीसी दुर्बल जीवको मारता हो और छुडाया जायं, तो भोगान्तराय लगता है,।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

३ असंयति जीवका जीना नहीं चाहना।

४ मरते हुए जीवको जबरदस्तिसे यानी शरीरके व्यापारसे बचावे तो पाप लगे।

५ जीवको मारे उसको एक पाप लगे और बचावे उसको अठारह पाप लगे।

६ साधुको कोइ दुष्ट फांसी दे गया हो, और कोइ दयावंत उस फांसीसे साधुको बचावे, तो उसको एकान्त पाप लगे।

७ दुःखी जीवको देखकरके विचार करना कि-'अहो! यह अपने कर्मसे दुःखी हो रहा है। उसके कर्म तूटे तो अच्छा' बस, ऐसी चिंतवना करे, उसका नाम अनुकंपा है। भोजन-वस्त्र वगैरह दे करके उस जीवको सुख उपजाना नहीं चाहिये।

प्रिय पाठक! हमारे तेरापंथी भाइओंकी दया के, नहीं नहीं निर्दयताके नमूने आपने देखलिये। अब उनके दान विषयक कुछ नियम देखिये।

दानके विषयमें.

१ साधुको छोडकरके किसी [गरीब-रंक-दुर्बल-दुःखी वगैरह]को दान देनेमें एकान्त पाप लगता है।

२ महावीर भगवंतने असंयती-अव्रतिओंको वरसी दान दिया जिससे उनको बारह वर्ष [फोडा] दुःख पडा।

३ साधुके सिवाय पुण्यका क्षेत्र कहीं भी नहीं है।

४ श्रावकको भी दान देनेमें पाप लगता है।

५ श्रावक झहरके कटोरेके समान तथा कुपात्र हैं। इसलिये उनको दान देनेमें तथा धर्मके उपकरणदेनेमें धर्म नहीं है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat　www.umaragyanbhandar.com

इनके सिवाय अनेकों मन्तव्य शास्त्रविरुद्ध प्रकाशित किये हैं। पाठकोने हमारे तेरापंथी भाइयोंकी दयाकी पराकाष्टा ऊपरसे देखली होगी। क्या उनलोगोंको कोईभी मनुष्य जैन कहनेका दावा कर सकता है? कभी नहीं। परमात्मा महावीर देवने साधुओंको तथा गृहस्थोंको ऐसी निर्दयता रखना फरमायाही नहीं। परन्तु ठीक है, जो लोग संस्कृत-व्याकरणादिको तो पढते नहीं, और टब्बाटुब्बीसे अपना कार्य निकालना चाहते हैं, वे ऐसे २ झूठे अर्थ करके सत्यमार्गसे परिभ्रष्ट हो जायँ इसमें आश्चर्य ही क्या है। याद रखना चाहिये कि-सिवाय व्याकरणादि पढनेके सूत्रोंके वास्तविक अर्थ नहीं प्राप्त हो सकते। और जो लोग नहीं पढे हुवे होते हैं, उनको जैसा भूत लगाया जाय, वैसा लग सकता है। जैसे 'घी खीचडी' का दृष्टान्त।

घी खीचडीका दृष्टान्त.

"एक विद्यानुरागी राजाके पास विद्वान् पुरोहित रहता था। उसकी प्रशंसा देश-विदेशमें हुआ करती थी। हजारों विद्वान् उस राजाके पास आकरके, अपनी विद्याका माहात्म्य दिखाकर लाखों रूपये इनाममें ले जाते थे। कालकी विचित्र महिमा है। वह अपना कार्य बराबर बजाया करता है। अपनी अपनी आयुष्यको पूरा करके राजा तथा पुरोहित दोनों परलोकमें जा बसे। राजाकी गद्दी पर राजपुत्र बैठा और पुरोहितजीका कार्य पुरोहितजीका लडका करने लगा। परन्तु ये दोनों संस्कृत ज्ञानसे बिलकुल वंचित ही थे। एक दिन पुरोहितकी स्त्रीने अपने पतिसे कहाः-'स्वामिनाथ!

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

राजाके पास अनेकों विद्वान् देश-विदेशसे आते हैं। आपके पिता संस्कृतके परमज्ञाता थे, जिससे समस्त विद्वान् प्रसन्न होकर जाते थे। आपने मोज-शौकमें विद्यारत्न प्राप्त किया नहीं। लेकिन अब आपका अपमान न हो, इस लिये आपको थोडी बहुत संस्कृत विद्या प्राप्त करलेनी चाहिये। धूर्तराट् पुरोहित बोलाः--'मुझे सब प्रकारकी विद्याएं कपट देवके प्रसादसे प्रसन्न हैं। व्याकरणको व्याधिकरण समझता हूं। तथा न्यायको नाई (हजाम) समझता हूँ। तू जराभी फिकर मत कर।' ऐसा कह करके राजाके पास चला गया।

राजाके पास अपनी बडाईका व्यूगल बजाता हुआ कहने लगाः-'महाराज! आजकल सच्ची विद्या लोगोंमें रही नहीं। सब लोग पांच २ दश २ श्लोक कंठस्थ करके यहाँ आते हैं, और आपको प्रसन्न करके भंडार लूँट जाते हैं। आपको अब जो पंडित आवे, उसकी परीक्षा करनी चाहिये। लीजिये, मैं यह श्लोक देता हूँ। इसका अर्थ,जो पंडित आवे, उससे पूछिये'। ऐसा कह करके पुरोहितजीने 'शान्ताकारं पद्मनिलयम्' ऐसे पदवाला एक श्लोक दिया। इसका अर्थ भी उसने राजाको समझाया। उसने कहा, 'इसका अर्थ है 'घी खचडी'। जो पंडित ऐसा अर्थ न करे उसको मूर्ख समझना'।

राजाने, वह श्लोक और उसका अर्थ दोनोंको अपने हृदयमें स्थापन कर लिया। राजाके पास काशी-कांची-नादिया-शान्तिपुर-भट्टपल्ली-मिथिला-काश्मीर तथा गुजरातसे पंडित आने लगे। और अपनी २ विद्वत्ता राजाको दिखाने लगे। जो पंडित राजसभामें आया, उसके सामने वही 'शान्ताकारं पद्म-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निलयं' वाला श्लोक धर दिया। इस श्लोकका अर्थ सब पंडित अपनी २ बुद्ध्यनुसार करने लगे। परन्तु मनमाना अर्थ नहीं होनेसे राजा प्रसन्न नहीं होता था। विचारे पंडित लोग खंडान्वय-दंडान्वयसे अर्थ करने लगे, तथा प्रकृति-प्रत्यय वगैरह सब पृथक् पृथक् दिखा करके अपना पांडित्य दिखाने लगे, परन्तु राजाकी प्रसन्नता न होने लगी। और विचारे विना दक्षिणाके अपना २ मार्ग लेने लगे। ऐसे सैंकडों पंडित आए, परन्तु राजा सबका अपमान करने लगा। राजा उस धूर्तपुरोहितके ऊपर अधिकाधिक प्रसन्न होने लगा, और उसकी जो बारह हजारकी आमदनी थी, वह बढाकर चौवीस हजारकी कर दी। राजाके मनमें यह विश्वास हो गया कि-सारे देशमें यदि कोई पंडित है तो यह पुरोहितही है।

एक दिन एक ब्राह्मणका लडका पुरोहितकी स्त्रीकी सेवा करने लगा। उसने एक दिन बात बनाकर कहाः-एक 'श्लोक ऐसा है कि जिसका अर्थ अपने राजा और आपके पति ये दोही जानते हैं। तीसरा कोई जानताही नहीं है। क्या आप उस श्लोकका अर्थ नहीं जानते हैं'! स्त्रीने यह बात मनमें रखली। रात्रीको जब पुरोहितजी आए, तब झटसे स्त्रीने पूछाः-'राजा जो श्लोक सब पंडितोंको पूछता है, उसका अर्थ क्या है?' पुरोहितने कहाः-'तू समझती नहीं है। षड्कर्णो भिद्यते मंत्रः, इस नियमानुसार यह बात तीसरेको नहीं कही जाती।'

स्त्रीने बराबर हठ पकडी, और कहाः-'मुझको अगर अर्थ नहीं कहेंगे, तो मैं समजूंगी कि-आपका मेरे पर विश्वास नहीं है। और प्रेमभी नहीं है।'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्त्रीके आगे भट्टजीका कहाँ तक चल सकता था ? स्त्रीके आग्रहसे पुरोहितजी कहने लगेः-' देख, मैं अर्थ तुझे कहता हूं,परन्तु किसीसे कहना नहीं। मुझको उस श्लोकका अर्थ नहीं आता है, परन्तु मैंने राजाको बहकानेके लिये 'घी खीचडी' ऐसा अर्थ कहा है। क्योंकि-वैसा अर्थ कोई पंडित करे नहीं, और राजाकी प्रसन्नता होवे नहीं। बस, अपना कामभी जमा रहे।'

प्रातःकाल होते ही वह लडका आया और स्त्रीके सामने वह बात छेडी। लडकेने कहाः-' आप सब बातमें प्रवीण हैं, परन्तु आश्चर्य है कि उस श्लोकका अर्थ आपको नहीं आता।' स्त्रीने झटसे कह दियाः-' यह क्या बोलता है, मुझे अर्थ आता है '। लडकेने कहाः-' मैं मानता नहीं हूं, तिसपरभी आता हो तो कह दीजिये।'

स्त्रीकी जाति कहाँ तक अपने हृदयमें बात रख सकती है? स्त्रीने कहाः-' देख! किसीसे कहना नहीं। उसका अर्थ तो,जो पंडित लोग करते है, वही है, परन्तु राजाको बहकानेके लिये ' घी खीचडी ' ऐसा अर्थ ठसा दिया है।'

लडकेको उस श्लोकका तात्पर्य ठीक २ मिल गया। हमेशा समस्त पंडितोंका अपमान देख करके लडकेके मनमें बहुतही ग्लानी उत्पन्न होती थी।

एक दिन बडा भारी पंडित राजाके पास आया, उसकी भी वही दशा होगी, ऐसा जान करके वह लडका उस पंडितके पास गया। और कहने लगाः-'पंडितजी महाराज! राजा महा-मूर्ख है,आपके सामने एक श्लोक रक्खेगा। उसका अर्थ राजाने जो सोच रक्खा है, वह आप नहीं करेंगे, तो आपका अपमान करके निकाल देगा। राजा उस श्लोकका जो अर्थ समझ बैठा है,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वह अर्थ मैं जानता हूँ। यदि आप यह स्वीकार करें कि-राजा आपको जो दे, उसमेंसे आधा मुझको देवें, तो मैं उसका अर्थ आपको कह दूँ।' पंडितजीने इस बातको स्वीकार किया, तब लडकेने कहा कि-' राजाको कह देना कि इसका अर्थ 'घी खीचडी' होता है।'

पंडितजी विचार करने लगे कि-बडा भारी अनर्थ किया है। अस्तु! पंडितजी अपने सब छात्रों (विद्यार्थियों) के साथ राजसभामें गये। राजाने शीघ्रही उस श्लोकको पंडितजीके सामने धर दिया। उसको देख करके पंडितजी कुछ हसे, और कहने लगेः-' महाराजाधिराज! ऐसी क्या बात निकाली। कुछ तत्त्वकी बात निकालिये। ऐसे श्लोकके अर्थ तो हमारे विद्यार्थी लोग भी कर देंगे।' ऐसा कह करके एक विद्यार्थीको खडा-कर दिया। और कहाः-' जा इस श्लोकका अर्थ राजाजीके कानमें जा करके कह दे।' विद्यार्थीने धीरेसे कानमें कहाः-भो राजन्! 'घी खीचडी'। 'घी खीचडी' ये चार अक्षर सु-नतेही राजा चौंक उठा। इतनाही नहीं, सिंहासनसे उतर करके पंडितजीको साष्टांग नमस्कार किया। और लाखों रुपये इनाममें दिये। पंडितजीका जयजयकार हुआ। पंडितजीने धीरेसे कहाः-"हे राजन्! यह इनाम वगैरह तो ठीक है, परन्तु मैं आपसे एक और बातकी याचना करता हूँ। वह यह है कि-आप मेरे पास एक वर्ष पर्यन्त संस्कृतका अभ्यास करिये। मैं आ-पका अधिक समय नहीं लूँगा। सिर्फ घंटा डेढ घंटा मूल २ बात समझाऊँगा।"

राजाने इस बातको स्वीकार किया। और हमेशां थोडी थोडी संस्कृत पढने लगा। राजा महाराजाओंकी बुद्धि स्वाभाविक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सुंदर तो होती ही है । बस, थोडेही दिनोंमें गद्य-पद्यका अर्थ राजा स्वयं करने लगा । एक दिन पंडितजी परीक्षा लेने लगे । उस समय पंडितजीने वही ' शान्ताकारं पद्मनिलयं ' पदवाला श्लोक राजाके सामने रक्खा और कहाः-' राजन् ! इसका अर्थ करिये. '

राजा ' शान्त आकृतिवाले, पद्म है स्थान जिसकों इस प्रकार जैसा चाहिये, वैसा अर्थ करने लगा। तब पंडितजीने कहाः- ' नहीं महाराज, इसका सच्चा अर्थ करिये । ' राजाने कहाः- ' पंडितजी महाराज, इसका दूसरा अर्थ होताही नहीं है । ' पंडितजी बोलेः-' महाराजाधिराज,इसका ' घी खीचडी ' तो अर्थ नहीं होता है ? ' राजाने कहाः-' वाह ! पंडितजी महाराज ! ऐसा अर्थ कभी होसकता है ? ।

पंडितजीने कहाः-' बस,महाराज ! आपने कितने पंडितोंका अपमान किया ? । कैसा अनर्थ किया ? ।

ऐसे बचन सुनतेही राजाने, उस झूठे अर्थ दिखलाने वाले पुरोहितको कैद करनेकी आज्ञा फरमाई । उसकी सारी मिलकत तथा आमदनी वगैरह छीन ली । सत्य अर्थका प्रकाश होनेसे की हुई अज्ञानताको धिक्कार देने लगा । "

' घी खीचडी ' के दृष्टान्तसे आप लोग समझ गये होंगे कि संस्कृत व्याकरणादि नहीं पढनेसे कैसी अवस्था होती है ? और व्याकरणादिके पढनेके अनन्तर कैसी पोल निकल जाती है ? । इस लिये जहाँ तक हमारे तेरापंथी भाई व्याकरणादि नहीं पढेंगे वहाँ तक परमात्माके सच्चे मार्गसे विमुखही रहेंगे ।

महानुभाव तेरापंथी भाइयो । अब भी कुछ समझजाओ और विद्याध्ययन करके स्वयं ज्ञान प्राप्त करो । लकीरके फकीर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मत बने रहो। पशुओंसे तुम्हारेमें कुछ भी बुद्धि अच्छी समझते हो तो उस बुद्धिका उपयोग, तत्त्वके विचार करनेमें करो। गदहेका पूंछ पकडा सो पकडा, ऐसा मत करो। स्वयं अपनी बुद्धिसे सार असारका, तत्त्व-अतत्त्वका, अच्छे-बुरेका विचार करो। जो बात अच्छी लगे, उसको ग्रहण करो। शास्त्र विरुद्ध कल्पनाएं करके अनन्त संसारी मत बनो। जी तो चाहता है कि--तुम्हारी सभी शास्त्र विरुद्ध कल्पनाओंका खण्डन किया जाय। परन्तु जो खण्डित है, उसका खण्डन क्या करना?। तुम्हारे मन्तव्योंमें प्रत्यक्ष निर्दयता दिखाई दे रही है-प्रत्यक्ष अधर्म दिखाई दे रहा है, तो फिर उसके खण्डनके लिये अधिक कोशिश करनेकी आवश्यकता ही क्या है?। और बहुतसी तुम्हारी अज्ञानता, तुम्हारे तेईस प्रश्नोंके उत्तरमें दिखलाई ही दी है, इस लिये अधिक न लिख करके यही लिखना काफी समझते हैं कि--कुछ पढो और ज्ञान प्राप्त करो, जिससे तुम्हें स्वयं मालूम हो जायगा कि--तुम्हारे भिखुनजीने तथा और साधुओंने जो २ प्ररूपणाएं की हैं, वे सब शास्त्र विरुद्ध की हैं। उन लोगोंने तुमको अपनी जालमें फँसा करके दुर्गतिमें लेजानेकी कोशिशकी है। इस लिये समझना हो तो समझ लो, उस दुर्गतिदायक ढोंचेको छोंडदो, बस इतनाही लिख करके अब पालीके तेरापंथिओंने हमारें आचार्य महाराज तथा उपाध्यायजी महाराजके साथ गत वैशाख शुक्लमें, जो चर्चाकी थी, उसका सारा वृत्तान्त यहां देता हूं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'पाली (मारवाड) में तेरापंथिओंके साथ चर्चा ।'

एक दिन घाणेरावाले गणेशमलजी तथा हीराचंदजी तातेडको आपसमें जिनप्रतिमा तथा मंदिरके विषयमें बातचित हुई, उसमें गणेशमलजीने कहाः-"प्रतिमा पूजनेमें धर्म है। कई श्रावकोंने प्रतिमा पूजी है।" इत्यादि बातें होती थीं, इतनेमें शिरेमलजी नामक तेरापंथी श्रावकने, जो वहां उपस्थित थे, गणेशमलजीसे कहाः-"क्या आप यह बात लिखकरके दे सकते हैं?" गणेशमलजीने कहाः-'मैं खुशीसे लिख सकता हूँ।' पश्चात् हीराचन्दजी तातेड तथा गणेशमलजी इन दोनोंने हस्ताक्षर करके लिख दिया। इसके बाद इस बातका निर्णय-चर्चा करनेके लिये दश-वीश आदमी मिलकर हमारे गुरुवर्य शास्त्रविशारद-जैनाचार्य श्रीमान् विजयधर्मसूरीश्वरजी महाराजके पास उपाश्रयमें आए। आते ही यह प्रश्न किया किः-'महाराज! प्रतिमा पूजनेमें धर्म है?' आचार्य महाराजने कहा-'हां'। फिर पूछा 'कौनसे सूत्रमें?' आचार्य महाराजने कहाः-'रायपसेणीसूत्रमें'। किस तरह? देखोः—

"सूर्याभदेवने उत्पन्न होनेके बाद अपने मनमें विचार किया कि-मुजको पूर्व-पश्चात्-हितकर-सुखकर-मुक्त्यर्थ-आगामी भवमें सुखकारी क्या होगा? इत्यादि विचार करके प्रभु पूजाकी, जहाँ नमुत्थुणं वगैरह करके 'धूवं दाउं-जिणवराणं' इत्यादि पाठमें साक्षात् जिनवर, ऐसा विशेषण देनेसे जिनप्रतिमा जिनतुल्य मानी हुई है।"

इत्यादि बातें सूरिजी फरमातेथे, इतनेमें युगराजनामक तेरापंथी बोल ऊठाकि "सूर्याभेदेवने नाटक किया, उस समय

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवानने न तो आदर किया है और न आज्ञा दी है। यदि धर्म होता तो भगवान् क्यों न आज्ञा देते ?"

उपाध्यायजी श्रीइन्द्रविजयजी महाराजने कहाः-"महानुभाव ! भगवान् मौन रहे, वैसा तीसरा पद हैः-'तुसणीए संचिट्ठति'। यदि पापका कारण होता तो भगवान् अवश्य निषेध करते। कई जगहाँपर भगवानने पापके कारणोंमें निषेध किया है। परन्तु ऐसा कहीं भी आप दिखा सकते हैं कि पापके कारणोमें भगवान् मौन रहे हों ?।"

इस चर्चामें विद्वद्रत्न पं० परमानन्दजी मध्यस्थ थे। पंडितजीने कहाः-'अनिषिद्धं स्वीकृतम्' इस न्यायसे सूर्याभदेवका नाटक प्रभुकी आज्ञा बाह्य नहीं है। तदन्तर सूरीश्वरजीने, सभाके समक्ष भगवान् मौन क्यों रहे ? इसका रहस्य इस तरह समझायाः-

"भगवान् यदि सूर्याभदेवको नाटक करनेकी आज्ञा दें तो चौदहहजार साधुओं तथा साध्विओंके स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होता है। यदि निषेध करें, तो भक्तिभरानिर्भर मनवाले देवोंकी भक्तिका भंग होता है। अत एव प्रभु मौन रहे। इससे सूर्याभदेवने नाटक किया, वह प्रमाण है। अप्रमाण नहीं। प्रभु इसमें सम्मत न होते तो दूसरीवार, सूर्याभदेवने आज्ञा मागी, उस समय प्रभु साफ 'ना' कह देते। अथवा दृष्टि फिराकर बैठ रहते। उसमेंसे कुछ भी नहीं किया तथा सूर्याभदेवने जो २ नाटक किये उसकी चर्चा जब गौतमस्वामीने भगवान्से पूछी है, तब जो बातथी वह भगवान्ने कह दी है। अगर भगवान्की निषेध बुद्धि होती तो भगवान् साथ २ यह भी कह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

देते कि- उसमें मेरी आज्ञा नहीं थी अथवा योंहि कह देते कि-सूर्याभदेवने नाटक करके पाप कर्म बांधा है। इनमेंसे कुछ भी नहीं कहनेसे नाटक तथा पूजा दोनों सूर्याभदेवको लाभदायक है, इसमें जरा भी शक नहीं।"

तेरापंथी श्रावक युगराज बोला कि-" भगवतीसूत्रमें जलते हुए घरसे धन निकाल लेने, तथा वल्मिक (राफडे)के शिखर तोडनेसे धन निकालनेके समय 'हियाए सुहाए' इत्यादि पाठ कहा है। तो क्या धन निकालनेमें भी मोक्ष धर्म था?"

उपाध्यायजी श्रीइन्द्रविजयजीने पूछाः-" आपने भगवतीसूत्रके जो दो पाठ है, उनको देखे हैं? अगर देखे हों तो कहिये वे कौनसे शतकमें हैं?"

तब वे बोलेः-" इस वख्त हमें याद नहीं हैं।" ऐसा कह करके सब चले गये। दूसरे दिन दो बजेका समय निश्चय किया गया।

निश्चय करनेके मुताबिक दो बजेके समय कोई न आया, बल्कि चार बजे तक कोई नहीं आया। चार बजनेके बाद तेरापंथीकी तरफसे एक आदमी आ करके कह गया कि-"आज सूत्र नहीं मिला। कल आपका लेक्चर होनेसे परसों एकमके दिन दुपहरको आवेंगे।"

एकमके दिन दुपहरको सब लोग उपाश्रयमें आए। आदमिओंकी भीड बहुत हो गई थी, परन्तु सब लोग शान्तचितसे श्रवण करते थे। जिनपूजाके विषयमें बहुत चर्चा हुई। तेरापंथी तथा ढूंढियोंकी तरफसे यह प्रश्न ऊठा कि-'प्रश्न व्याकरणमें देवमंदिर तथा प्रतिमा करानेवाला मंदमति है, ऐसा कहा है, इसका क्या कारण?।'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसके उत्तरमें यह कहा गया कि-"साधु चैत्यकी वैयावच्च करे, ऐसे पाठोंके साथ, उपर्युक्त पाठका विरोध आता है। इस लिये पूर्व जो आश्रवद्वार है, उसके अधिकारि अनार्य लोग दिखलाये हैं। अत एव जहाँ देवमंदिर-प्रतिमा वगैरह जो २ बातें हैं, वे अनार्यके लिये समजना। देवमंदिर कहनेसे जिनमंदिर नहीं घट सकता। जिनमंदिर वैसा पाठ वहाँ नहीं है।"

एसा कहनेसे सब लोग चूप हो गये। पुनः सूर्याभदेवकी पूजा संबंधी प्रश्न उन लोगोंने ऊठाया। उन्होंने कहाः-"सूर्याभदेवने जैसे पूजाकी, वैसे मिथ्यात्वी देव तथा अभव्य भी पूजा करते हैं।"

श्रीमान् पं० परमानन्दजीने कहाः-"पूजा हुई, यह आप स्वीकार करते हैं, सूर्याभदेव समकिति है, वह भी आप स्वीकार करते हैं, तो फिर पूजा समकिती जीवोंकी करणी सिद्ध हुई।"

इतनेमें एकने कहाः-"मिथ्यात्वी देव पूजा करते हैं, अभव्य भी करते हैं। अत एव वह तो देवोंका आचार है।"

आचार्यमहाराजने कहाः-"महानुभावो! अभव्य-मिथ्यादृष्टि जिनप्रतिमाकी पूजा करते हैं, ऐसा कोई पाठ तुम्हारी दृष्टिमें है? यदि हो तो दिखा दीजिये, जिससे खुलासा हो जाय।"

एक बुढा आदमी बीचमें बोल ऊठाः-,,क्या सर्व इन्द्र समकित दृष्टि हैं?" आचार्य महाराजने कहा 'हां'। तब वह कहने लगाः-'नहीं, समकित दृष्टि नहीं है'। तब लालचन्दजी तथा शिरेमलजीने उसको रोका और कहाः-"इन्द्र समकिति हैं।" जब उसके पक्षवालोंने कहा, तब वह चूप हुआ। बीच

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बीचमें दोनों पक्षके श्रावकोंमें ऐसी गडबड मचजाती थी कि-कोई क्या कह रहा है, यह भी नहीं सुनाजाता था। परन्तु पंडित प्रवर परमानन्दजी, उन लोगोंके व्यर्थ कोलाहलको, शान्त कराते थे।

वकील शिरेमलजी, लालचन्दजी तथा युगराजजीने कहाः-"सूर्याभदेवने बत्तीस वस्तुकी पूजाकी है। उसी तरह जिनप्रतिमाकी पूजा भी की है।"

पंडितजीने कहाः-"महाराजजी! इसका उत्तर क्या है?। क्यों कि ये लोग जिनप्रतिमाकी पूजाको, और पूजाओंके समान मानते हैं। यदि ऐसा ही हो तो विशेष बात ठहरेगी नहीं।"

आचार्य महाराजने कहाः-"जिनप्रतिमाकी पूजाके समय हितकारी-कल्याणकारि-सुखकारी आगे मुझे होगी ऐसा कहा है तथा नमुत्थुणं कहा है, वैसे शब्द यदि ३१ वस्तुओंके आगे कहे हों, तो दिखलाओ। अगर वैसा नहीं है, तो कदाग्रह ग्रहसे मुक्त हो जाओ।" तेरापंथीके श्रावकोंने कहाः-"हियाए सुयाए" इत्यादि पाठ भगवती सूत्रमें है। वहाँ धन निकालनेके लिये कहा है। धनमें कुछ धर्म नहीं है, तथापि कहा है, इसका क्या कारण?"

आचार्य महाराजने कहाः-"उस पाठका मतलब आपको याद है?" उन्होने कहाः-हां याद है। भगवतीसूत्रके दूसरे शतकके प्रथम उद्देशेमें तथा पन्दरहवे शतकके प्रथम उद्देशेमें वह अधिकार है।"

आचार्य महाराजने कहाः-"वहाँ पर कैसा अधिकार चला हैं? उसका मतलब क्या है?"

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसके उत्तरमें शिरेमलजी कहने लगे, तब उसके पक्षका दूसरा आदमी निषेध करने लगा। दोनोंको आपसमें 'हा' 'ना' की लडाई हुई, और योंही दश मिनिट चली गई। इसके बाद पंडितजीने कहा किः–महाराजजी आपही फरमाईये। आचार्य महाराजने उस पाठको निकाल करके पंडितजीके सामने रख दिया। "गोशालेने, आनंदसाधुके पास कही हुई, चार वणिक्की कथा कही। वल्मिक (राफडे) के तीन शीखर तोडे, जिसमेंसे जल–सुवर्ण वगैरह माल नीकला। चौथा शिखर तोडनेके लिये खडा हुआ, तब वृद्ध वणिक् शिक्षा देता है। वे वणिक्के विशेषण हैं, धनके विशेषण नहीं हैं।"

इस बातको सुनकरके तथा पाठको देख करके पंडितजी आश्चर्यमग्न हो गये और उन लोगोंकी अज्ञानता पर तिरस्कार जाहिर करने लगे।

जब ढूंढक तथा तेरापंथी, यह समझ गये कि–'पाठ उलटा है–अपने कहे मुताबिक नहीं है' तब कहने लगे कि–"हम यहां निःश्रेयस शब्दका अर्थ मुक्ति नहीं है, ऐसा कहना चाहते हैं।" पंडितजीने कहाः–'महाराज इसका उत्तर क्या है?'।

आचार्य महाराजने फरमायाः–"शिव-कल्याण–निर्वाण तथा कैवल्य वगैरह मुक्तिके ही पर्याय हैं।" पंडितजीने कहाः–'बराबर है। निःश्रेयस शब्द दूसरे शतकके प्रथम उद्देशेमें है। वहाँ मुक्ति अर्थ किया है।'

इत्यादि बातोंसे स्पष्ट मूर्ति पूजा सिद्ध होने लगी। तब श्रावक लोगोने आपसमें गडबड मचा दी। इसके बाद वे लोग

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस बात पर आये कि-प्रश्न लिख करके महाराजको दिये जाँय। दवादकलम-और कागज मंगवाया गया। उतनेमें तेरापंथीका एक आदमी आया। उसने उन लोगोंसे कहाः-'चलिये आपको बुलाते हैं।' यह भी एक तरहकी चालबाजी ही थी। अस्तु, सब लोग चले गये।

एक बात और कहनेकी रह गई। जिस समय 'महानिशिथ प्रमाण है कि-अप्रमाण?' इस प्रकारकी बात चली थी, उस समय केसरीमल्लजीने यह कहा था कि-"मूर्ति पूजाकी प्ररुपणा करे, वह साधु नरकगामी है, वैसा उसमें लिखा है"। परन्तु उस पाठमें 'प्ररुपक' शब्द नहीं है, यह बात, उपाध्यायजी श्रीइन्द्रविजयजी महाराजने, पंडितजीके समक्ष केशरीमलजीको समझाई। केशरीमलजीने अपनी भूल स्वीकार की। इतना ही नहीं, परन्तु पंडितजीके कहनेके मुताबिक सभाके बीचमें जोर शोरसे अपनी भूल स्वीकार की।

आचार्य महाराजने मूर्तिपूजाके विषयमें बहुत समझाया तब उसने कहा कि-मैं दर्शन हमेशा करता हूँ। पूजाके विषयमें कहा तब वे कहने लगेः-"मैं लकीरका फकीर हूँ।"

एक और भी बात है। अनुकम्पाके विषयमें तेरापंथी कहते हैं कि-'महावीर स्वामी चूक गये।' ऐसा आचार्य महाराजने कहा तब पंडितजीने तेरापंथी श्रावकोंसे पूछाः-'क्या यह बात सत्य है?'। जब ये लोग बात ऊडानेकी चालाकी करने लगे, तब पंडितजीने फिर कहाः-'जो बात हो, सो बराबर कहिये।' इतने में बाईस टोलेवाले बोल उठे कि-हम उस बातको नहीं मानते हैं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वे लोग यह कह करके ऊठ गये थे कि आधे घंटेमें प्रश्न भेजेंगे। परन्तु दूसरे दिनके बारह बजे तक कोई न आया। एक बजे २३ प्रश्नोंका एक लंबा चौडा चीट्ठा ले करके सब लोग आए। पंडितजीको बुलाकरके उन लोगोंने कहाः-पंडितजी, इसको पढिए। पंडितजी पढने लगे। पंडितजीको भी उस चीट्ठेको पढते २ ऐसे २ शब्दोंका ज्ञान और अनुभव होने लगा जो कभी न पढेथे, और न सुने थे। पंडितजी वारंवार यह कहते जाते थे कि-'यह प्रश्न ठीक नहीं है,' 'यहाँ पर यह शब्द न चाहिये,' 'ये शब्द बिलकुल अशुद्ध हैं,' तब तेरापंथी श्रावक कहने लगेः-'लिखने वालेका यह दोष है।' ठीक ये भी जीवरामभट्टके सच्चे नातेदार ही निकले।

प्रिय पाठक! तेरापंथीके २३ प्रश्न, ज्योंके त्यों, उनके उत्तरके साथ दिये जायेंगे, जिससे विदित हो जायगा कि जिनको भाषाकी भी शुद्धाशुद्धिका ख्याल नहीं,है वे सूत्रोंके पाठोंको क्या समझ सकते हैं। खैर, अभी उनके २३ प्रश्नोंमेंसे कुछ शब्द, नमूनेकी तौर पर यहाँ उद्धृत करना समुचित समझता हूँ। देखिये, 'प्रथमकवले मक्षिकापातः' इस नियमको चरितार्थ करता हुआ 'श्री जिनायै नमोः,' 'ध्रव्य पूजा,' 'आग्या,' 'पुरुपते,' अग्या,' आदिके बदले 'आददे,' 'पाश्यांण,' पर्यायके बदले 'प्रज्यांये,' त्रसके बदले 'तस्य' 'उप्पीयोग' छद्मस्थके बदले 'छंदमसत,' अध्ययनके बदले 'अध्ये,' दर्शन चारित्रके बदले 'दर्शचात्र' शत्रुंजयके बदले 'श्रेतुर्जा,' 'व्याकर्ण,' हिंसाके बदले 'हंस्या' कहाँ तक लिखुँ? उनके २३ प्रश्नोंमें अशुद्धरूपी कीडे इतने बिलबिलाते हैं, जिनका कुछ ठिकानाही नहीं।

अब इस वृत्तान्तको यहाँ ही समाप्त करता हूँ, और आगे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उन लोगोंके पूछे हुए तेईस प्रश्न तथा उनके उत्तर प्रकाशित करता हूँ।

तेरापंथिओंके तेईस प्रश्नोंके उत्तर.

परम पूज्य, प्रातःस्मरणीय, गुरु महाराज शास्त्रविशारद-जैनाचार्य श्रीविजयधर्मसूरीश्वरजी महाराज तथा उपाध्यायजी महाराज श्रीइन्द्रविजयजीके साथ, पाली-मारवाडमें तेरापंथी श्रावकोंकी मूर्तिपूजा वगैरह विषयोंमें, चार दिन तक जो चर्चा हुई उसका वृत्तान्त पाठक ऊपर पढ चुके हैं। अब उनके, उन तेईस प्रश्नोंके उत्तर प्रकाशित किये जाते हैं, जिन प्रश्नोंका एक लंबा चीट्ठा उन लोगोंने ता. २८-४-१४ वैशाख सुद ३ के दिन, आचार्य महाराजको दिया था। जिस समय ये प्रश्न दिये थे, उसी समय सबके समक्ष यह बात निश्चय हुई थी कि-आचार्य महाराजकी तरफसे इन प्रश्नोंके उत्तर अखबारके द्वारा मिलेंगे। बस, निश्चय होनेके मुताबिक, आचार्य महाराजकी तरफसे, उन प्रश्नोंके उत्तर भावनगरके 'जैनशासन' नामक पत्रमें दिये गये थे। अब इस पुस्तकमें शामिल किये जाते हैं।

तेरापंथी श्रावकोंने तेईस प्रश्नोंके उत्तर उनके माने हुए बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठसे मांगे हैं। परन्तु बत्तीस ही मानना, पैंतालीस या निर्युक्ति-टीका इत्यादि न मानना, इसका क्या कारण है? इस विषय पर, यहाँ कुछ परामर्श करना समुचित समझते हैं।

बत्तीस सूत्र मानने वाले महानुभाव यदि यह कहें कि-हम इस लिये बत्तीस ही सूत्र मानते हैं कि-वे गणधर देवके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बनाए हुए हैं। परन्तु यह उन लोगोंकी भूल है। गणधरोंने तो द्वादशांगीकी ही रचना की है। उसमें भी दृष्टिवाद तो विच्छेद गया है। अब रहे ग्यारह अंग। उन ग्यारह अंगोंको ही मानने चाहिये। किस आधारसे उपांगादि सूत्रोंको मानते हैं? यह दिखलाना चाहिये। यदि यह कहा जाय कि-नंदीसूत्रके आधारसे मानते हैं, तब तो फिर नंदीसूत्रमें कहे हुए सभी सूत्र निर्युक्ति वगैरहको मानने चाहिये। नंदीसूत्र देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणका बनाया हुआ है, उस नंदीसूत्रको जब मानते है, तब देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणके उद्धृत किये हुए सभी सूत्रोंको क्यों न मानने चाहिये?।

अच्छा! अब जो बत्तीस सूत्र, माननेका दावा करते हैं, उनको भी पूरी चालसे नहीं मानते हैं, इसके नमूने कुछ दिखला देने चाहिये।

नंदीसूत्र जो बत्तीस सूत्रोंमेंसे एक है, उसमें साफ २ लिखा है कि-' टीका, निर्युक्ति तथा और सूत्र-प्रकरणादिको मानना चाहिये, परन्तु मानते नहीं हैं। इसके सिवाय देखिये भगवती सूत्रके २५ वे शतकके तीसरे उद्देशेमें पृष्ठ १६८२ में कहा है कि—

"सुतत्थो खलु पढमो बीओ निज्जुत्तिमीसओ भणिओ।
तइओ य निरवसेसो एस विही होइ अणुओगे ॥१॥"

अर्थात्—प्रथम सूत्रार्थ ही देना। दूसरे निर्युक्ति सहित देना। और तीसरे निरवशेष (संपूर्ण) देना। यह विधि अनुयोग अर्थात् अर्थ कथनकी है।

इस पाठसे सिद्ध होता है कि-निर्युक्ति को मानना, तिस पर भी क्यों नहीं मानते?। तीसरे प्रकारकी व्याख्यामें भाष्य-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चूर्णि और टीकाका भी समावेश होता है । परन्तु मानते नहीं है ।

अनुयोग द्वार सूत्रमें दो प्रकारका अनुगम कहा है:—

"सुत्ताणुगमे निज्जुत्तिअणुगमे य । तथा—निज्जुत्ति-अणुगमे तिविहे पण्णत्ते उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे इत्यादि । तथा उद्देसे निद्देसे निगमे खित्त काल पूरिसे य"

इत्यादि दो गाथाएं हैं ॥

अब हम पूछते है कि यदि पंचांगीको नहीं मानोगे तो उक्त पाठका अर्थ क्या करोगे ?।

अच्छा इसके सिवाय और देखिये:—

उत्तराध्ययन सूत्रके २८ वे अध्ययनकी २३ वीं गाथामें कहा है—

सो होई अभिगमरुई सुयनाणं जेण अत्थओ दिट्ठं ।
इक्कारस अंगाई पइन्नगं दिठिवाओ य ॥ १ ॥

कहनेका मतलब कि—अभिगमकीरुचि, केवल सूत्रोंसे ही नहीं होती, परन्तु प्रकरणोंसे लेकरके यावत् दृष्टिवाद पर्यन्तके जो सूत्र हैं, उनके पढनेसे होती है ।

इससे भी सिद्ध होता है कि सूत्रके सिवाय और भी शास्त्र मानने चाहिये । ऐसे ऐसे पाठ होने पर भी वे लोग उन पाठोंके मुताबिक चलते नहीं है । अब कहाँ रहा बत्तीस सूत्रों-को मानना ? बत्तीस सूत्रके कथनानुसार भी चलते हों तो उन लोगोंको निर्युक्ति वगैरह अवश्य मानने ही चाहिए।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अच्छा, अब यदि वे, सूत्रों के अर्थ, मूल अक्षरोंसे ही निकालते हों, तो वह उनकी बडी भारी भूल है। सूत्रोंके अर्थ, प्राचीन ऋषि लोगोंकी परंपरासे जो चले आये हैं वैसे, तथा अर्थ करनेकी जो रीति है उसीसे करने चाहिये। यह बात हम ही नहीं कहते हैं, परन्तु खास सूत्रकार फरमाते हैं। देखिये अनुयोग द्वारके ५१८ वे पृष्ठमें लिखा है:-

"आगमे तिविहे पन्नत्ते, सुत्तागमे १, अत्थागमे २, तदुभयागमे ३"

अर्थात् सूत्रके अक्षर यह सूत्रागमे प्रथम भेद हुआ। अर्थ रूप आगम, जिसमें टीका-निर्युक्ति वगैरह है, यह दूसरा भेद हुआ। और तीसरे भेदमें सूत्र तथा अर्थ दोनों आये।

इससे भी सूत्रका वास्तविक अर्थ प्राप्त करनेके लिये टीका-निर्युक्ति वगैरहकी सहायता अवश्य लेनी पडेगी।

अब यदि कोई यह घमंड रक्खे की-हम मूल सूत्रके अक्षरोंसे उनके यथार्थ अर्थको प्राप्त कर सकते हैं, तो वह बडी भारी भूल है। कई पाठ ऐसे होते हैं, जिनके अर्थके लिये, परंपरासे धारते हुए चले आए अर्थपर अवश्य दृष्टि दौडानी पडती है। सूत्रोंके थोडे अक्षरोंमें बहुत अर्थ निकलते हैं। अनुयोग द्वारके १२३ पृष्ठमें 'ढोढिणी गिणिया अमच्चे' ऐसा पाठ है। इन कुछ नव अक्षरोंमेंसे, कोई भी पंडित यथार्थ भावार्थ नहीं बतला सकता। ढोढणी कौनथी? गणिका कौनथी? मंत्री कौनथा? क्या उनका संबन्ध था? किस तरह हुआ था?। ये बाते, मूल सूत्रके ९ अक्षरोंसे कभी नहीं निकल सकतीं। ऐसे २ अनेकों पाठ हैं, जिनके अर्थके लिये पूर्वाचार्योंकी बनाई हुई टीकाएं-निर्युक्ति वगैरह पर ध्यान देना ही पडेगा।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इन बातोंसे सिद्ध होता है कि-जिन्होंने बत्तीस सूत्र (मूल) के ऊपरही अपना आधार रख छोडा है, वे यथार्थमें भूले हुए हैं। यदि वे बत्तीस सूत्रके अनुसारभी चलना स्वीकार करते हों तो उनको सूत्रकी आज्ञानुसार, और सूत्र तथा टीका-निर्युक्ति वगैरह अवश्य मानने चाहिये।

आश्चर्यकी बात है कि—बत्तीस सूत्र मानने वाले महानुभाव एकही कर्ताके एक वचनको मानते हैं, और दूसरे वचन को उत्थापते हैं। जैसे श्रीभद्रबाहुस्वामिकृत दशाश्रुतस्कंधको मानते हैं, और उन्ही भद्रबाहुस्वामिकृत दश निर्युक्तिओंको नहीं मानते हैं। कैसा अन्याय ?।

अब इस परामर्शको यहाँही समाप्त करके उन महानुभावोंके पूछे हुए तेईस प्रश्नोंके जवाब देना आरंभ करते हैं। उनके प्रश्न जैसेके तैसे यहाँपर उद्धृत किये जायगें, जिससें पाठक देख लें कि-जिनको भाषा लिखनेकी तमिज नहीं है, जिनको प्रश्न कैसे पूछे जाते हैं ? यहभी मालूम नहीं है और जिनका एक एक शब्द प्रायः भूलसें खाली नहीं है, वे क्या समझ करके मूल सूत्रसे प्रश्नके उत्तर मांगते होगे ?।

प्रश्न १—श्री जीनप्रतीमाकी द्रव्य पूजा करणेमे धर्म ओर श्री जिनेस्वरदेवकि-आग्या पुरूपते हें सो जीनेस्वरदेवने बतीस सात्रांमे कीस जगे अग्या फरमाइ हें और धर्मका हे।

उत्तर-रायपसेणी सूत्रके पृष्ठ ३० में, सूर्याभदेवने, आभियोगिक देवोंको आमलकप्पा नगरीमें, जहाँ वीरप्रभु विचरतेथे, वहां एक योजन जमीन साफ करनेको कहा है। वहां देव, परमात्मा महावीर देवके पास जा करके इस तरह कहते हैं-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

"जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छई, उवागच्छईत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुतो आयाहिणं पयाहिणं करेंति २ त्ता वंदइ नमंसइ नमंसित्ता एवं वयासी अम्हेणं भंते सूरियाभस्स देवस्स आभियोगिया देवा दिवाणुप्पियं वंदामो नमंसामो सक्कारेमो संमाणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामो देवाइं समणे भगवं महावीरे ते देवे एवं वयासि पोराणमेयं देवा! जायमेयं देवा! कीच्चमेयं देवा! कराणिज्जमेयं देवा! आचिण्णमेयं देवा! अब्भणुण्णायमेयं देवा!।"

अर्थात्-जहां श्रमण भगवान् महावीर हैं, वहां आ करके भगवान्को तीन प्रदक्षिणा दे करके ऐसे बोलेः-हे भगवन्! हम सूर्याभदेवके आभियोगिक (नोकर), आप देवानुप्रियको वंदणा करते हैं। नमस्कार करते हैं। सत्कार करते हैं। सन्मान करते हैं। कल्याण मंगलके निमित्त देव प्रतिमाकी तरह पर्युपासना करते हैं। (देवोंके ऐसे कहनेके बाद) 'हे देवो!' ऐसा आमंत्रण करके श्रमणभगवान् महावीर उन देवोंके प्रति इस तरह बोलेः-'हे देवो! यह प्राचीन है, यह आचार है, यह कृत्य है, यह करणीय है, यह पूर्व देवोंने आचरण किया हुआ है। इस तरह समस्त तीर्थंकरोंने आज्ञा की है, और मेरी भी आज्ञा है।

ऊपर लिखे हुए पाठमें, भगवान्ने, देव प्रतिमाकी तरह पूजा करनेमें 'तुम्हारा कृत्य,' तुम्हारा आचार' वगैरह कह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करके आज्ञा तथा धर्म दिखलाया, तो 'प्रतिमा पूजा' में आज्ञा और धर्म स्वतः सिद्ध हुआ। क्यों कि 'प्रतिमाकी तरह' ऐसा कह करके प्रतिमाका तो खास दृष्टान्त ही दिया है।

इसके सिवाय देखिये। महाकल्पसूत्र, जिसका नाम नंदीसूत्रके ४०९ वे पृष्ठमें "उक्कालिअ अणेगाविहं पन्नत्तं तंजहा-दसवेकालिअं कप्पियाकाप्पियं चुल्लुकप्पसुयं महाकप्पसुयं उववाइयं रायपसेणियं....."इत्यादि पाठमें है, उसमें इस तरहका पाठ है-

"तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव तुंगिआए नयरीए बहवे समणोवासगा परिसंति संखे सयए सिलप्पवाले रिसिदत्ते दमगे पुक्खली निविद्धे सुप्पइट्ठे आणुदत्ते सोमिले नरवम्मे आणंदे कामदेवा इणो अज्जे अन्नत्थ गामे परिवसंति अड्ढा दित्ता वित्थिण्णविपुलवाहणा जाव उद्धट्ठा गहिअट्ठा चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं पालेमाणा निग्गंथाणं निग्गंथीणं फासुएसणिज्जेणं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिलाभेमाणा चेइआलाएसु तिसंझासमए चंदणपुप्फधूववत्थाईहिं अच्चणं कुणमाणा जाव जिणहरे विहरंति। से केणट्ठेणं?। गोयमा! जो जिणपडिमं पूणइ सो नरो सम्मदिट्ठी जाणिअव्वो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जो जिणपडिमं न पूणइ सो नरो मिच्छदिट्ठी जाणिअव्वो मिच्छदिट्ठिस्स नाणं न हवइ चरणं मुक्खं न हवइ सम्मादिट्ठिस्स नाणं चरणं मुक्खं च हवइ। से तेणट्ठेणं गोयमा ! सम्मदिठिस्स जिणपडिमाणं सुगंधपुप्फंचदणविलेवणेहिं पूजा कायव्वा"

अर्थात्-उस कालमें, उस समयमें तुंगिया नगरीमें बहुत श्रमणोपासक-श्रावक रहते थे। शंख, शतक, शिलप्रवाल, ऋषिदत्त, दमक, पुष्कली, निविद्ध, सुप्रतिष्ठ, भानुदत्त, सोमिल, नरवर्मा, आनंद, कामदेवादि आर्य, अन्यत्र-दूसरे गाममें रहते हैं। जो आढ्य, दीप्त, विस्तीर्ण, विपुलवाहनवाले (यावत्) लब्धार्थ, गृहीतार्थ, चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या तथा पूर्णिमा इन तिथिओंमें प्रतिपूर्ण पौषधको पालते, साधु तथा साध्वीओंको प्रासुक एषणीय अशन-पान-खादिम-स्वादिम आहारको प्रतिलाभते और चैत्यालयोंमें तिन्हों संध्यामें चंदन-पूष्प धूप तथा वस्त्रादिसे अर्चन करते (यावत्) जिनमंदिरमें विहरते हैं। हे भगवन्! वे श्रावक, किस हेतुसे पूजा करते हैं?। गौतम! जो जिन प्रतिमाको पूजता है-वह मनुष्य, सम्यग् दृष्टि जानना। और जो मनुष्य जिनप्रतिमाको नहीं पूजता है, वह मिथ्यादृष्टि जानना। मिथ्या दृष्टिको ज्ञान-चारित्र-मोक्ष नहीं है। और सम्यक् दृष्टिको ज्ञान-चारित्र-मोक्ष है। अत एव हे गौतम! सम्यग् दृष्टि सुगंधि पुष्प तथा चन्दनके विलेपनसे जिन प्रतिमाकी पूजा करते हैं।"

इत्यादि पाठोंसे स्पष्ट सिद्ध होता है कि-भगवान्ने द्रव्य पूजा करनेमें धर्म कहा है, तथा आज्ञा फरमाई है। तिस परभी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आग्रहको न छोडो, तो तुम्हारे भाग्यकी बात है। प्रतिमाकी पूजा करने वाला समकित दृष्टि, अन्य मिथ्यादृष्टि दिखलाया, तो फिर इससे अधिक क्या चाहिये? रायपसेणी, जीवाभिगम, ज्ञाता इत्यादिमें प्रत्यक्षपाठ विद्यमान है, तिसपरभी धर्म तथा आज्ञाका प्रश्न पूछने वाले आप लोग अभी कैसे अँधेरेमें फिरते हो, यह स्वयं विचार करो।

"प्रश्न-२ श्रीजिनेसर देवने बतीस सात्रमे कीसी जगा जैनमंदीर करानेमे ओर संग कडानेमै अग्या नही फरमाई है न धर्म फरमाय है तो फेर आप ईण दोनां कांमांमे धर्म ओर अग्या कीसी सासत्रके रूसे परूपते हो सो बतीस सात्रोमें इनका अधिकार बतलावै।"

उत्तर-हम पूछते हैं कि-जिनेश्वरदेवने जिनमंदिर बनवानेकी और संघ निकालनेकी आज्ञा और धर्म नहीं फरमाया, ऐसा ज्ञान आपको कहांसे हुआ ?। क्या सूत्रमें निषेध आप लोगोंने किसी जगह पाया है ? यदि पायाथा, तो वह पाठ स्पष्ट लिखना चाहिये था। सूत्रोंमें जगह जगह मिथ्यात्वके कारणोंकी व्याख्या आई है। उसमें किसी जगह जिनमंदिर और संघ निकालना मिथ्यात्वका कारण नहीं दिखलाया। यदि मिथ्यात्वका कारण और जिनाज्ञा बाहर है, ऐसा कोई लेख आप लोगोंके दृष्टिगोचर हुआ हो तो दिखलाना चाहिये था। और यदि नहीं हुआ है तो समझलो कि-जैनमंदिर करानेमें और संघ निकालनेमें प्रभुकी आज्ञा है। और जहां आज्ञा है, वहां धर्म है। इतना कहनेसे अगर आप लोगोंको संतोष न होता हो तो लीजिये और प्रमाण।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नंदिसूत्र बत्तीस सूत्रोंमे है। उसी नंदिसूत्रमें महानिशीथ सूत्रका नाम दिया हुआ है। उसी महानिशीथसूत्रमें लिखा है कि-'जिनमंदिर करानेवाले बारवे स्वर्गमें जाते हैं'। अब विचारनेकी बात है कि-जो समकितवंत जीव हैं, वे वैमानिकका आयुष बांधते हैं। इस लिये जिनमंदिर करानेवाले खास सम्यक्दृष्टि हैं, ऐसा सिद्ध होता है। और समकितवंत जीवोंको आज्ञा और धर्म होनेसे हम लोग इस बातका उपदेश देते हैं।

अब रही संघनिकालनेके विषयकी बात। इसके विषयमें समझना चाहिये कि-परमात्मा महावीर देवके समय श्रेणिक-कोणिक वगैरह कई राजे, रथ, घोडे, हाथी, पैदल वगैरह चतुरंगी सेनाके साथ बडे आडंबरसे भगवान्को वंदणा करनेकों जाते थे। वहाँ रथोंको कइ जगह 'धर्म रथ' की उपमा दी है। इसके सिवाय ज्ञाताधर्मकथा तथा अंतगडदशांगमें शत्रुंजय पर्वतका नाम जगह २ आता है। उस तीर्थ पर हजारों मुनिराज सिद्ध० बुद्ध० मुक्त हुए। उस पर्वतके दर्शन करनेके लिये, भरत महाराजादि कई राजे-महाराजे तथा शेठ-शाहुकार संघ निकाल करके संघवी-संघपति हुए हैं। उनके नामपर उपनाम लगे हुए हैं। इससे सिद्ध होता है कि-संघ निकालनेकी परंपरा सूत्रके अनुसार ही है।

"प्रश्न ३ आणदकांमदेव आददे १० श्रावक हुवे है वे महा ऋद्धिवांन बारे व्रतधारी हुवे उणांने जैन मंदिर वो सीगकीउन कडायैं अगर कडायै वो करायै हुवै तो पाठे बतलावै।"

उत्तर-परमात्मा महावीर देवके समयमें लोग अपने मकानोंमें मंदिर रखते थे और भगवान्की पूजा करते थे। उवबाई

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सूत्रमें चंपानगरीका वर्णन आया है, वहाँ पर 'अरिहंतचेइयाई बहुलाई' इत्यादि पाठसे उस समयमें अरिहंतके अनेक मंदिर थे, वैसा सिद्ध होता है। दूसरी यह बात है कि-आणंदादि श्रावकोंने अपने जीवनमें जो २ कार्य किये हैं, उन सभीका उल्लेख सूत्रोंमें नहीं आया है। इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि उन्होंने मंदिर नहीं बनवाये थे, या संघ नहीं निकालेथे। आणंदादि श्रावकोनें प्रतिमाको प्रमाण की है, इस बातका पुरावा यह है कि व्रत उच्चारणके समय सम्यक्त्वका आलावा आया है। जिसमे समकितकी शुद्धिके लिये अन्यदर्शनीय, अन्यदर्शनके देव तथा अन्यमतिओंने स्वीकार की हुई जिनप्रतिमाको वांदु नहीं-पूजा न करुं, इत्यादि पाठ मिलते हैं। और इससे जिनप्रतिमा तथा जिनमंदिर थे, यह भी सिद्ध होता है। तथा जहाँ प्राणातिपात विरमण, वगैरह बारहव्रत लिये हैं, वहाँ अनेक प्रकारके नियम किये हैं। उन नियमोंमें यदि जिनमंदिर करानेमें पाप होता तो वह भी नियम कर देते कि-जिनमंदिर करवाऊं नही। ऐसा नियम नहीं करनेसे निश्चय होता है कि-वे जिन मंदिर बनवानेमें आरंभ नहीं समझे थे। उन श्रावकोंने जिनमंदिर बनवाऐ हैं। इसका पुरावा यह है कि-नंदीसूत्रके ४६५ वे पृष्ठमें आणंदादि श्रावकोंका इस तरह अधिकार है:—"उवासगदसासुणं सवासगाणं नगराइं उज्जागाइं चेइचाइं वणसंडाइं समोसरणाइं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहाओ" इत्यादि इसका मतलब यह है कि-उपासकदशांगसूत्रमें आणंदादि श्रावकोंके नगर, उद्यान, चैत्य (जिनमंदिर) वनखंड, समवसरण, राजे, मात-पिता, धर्मगुरु तथा धर्मकथा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इत्यादि अनेक चीजोका वर्णन है। ऐसे नंदीसूत्र तथा समवायांगमेंभी कहा है। इससेही सिद्ध होता है कि आणंदादि श्रावकोंके मंदिर थे। अगर उन्होंने नहीं बनवाए थे तो 'उनके मंदिर' ऐसे क्यों कर कहते?।

यहाँ पर 'चैत्य' शब्दका 'ज्ञान' 'साधु' या 'बगीचा' अर्थ नहीं होसकता। क्यों कि-उन्ही अर्थको कहने वाले 'धर्मकथा' 'धर्मगुरु' तथा 'उद्यान' शब्द लिये हुए हैं।

अब संघकी बात यह है कि-उस समयमें भी गिरिराजश्री शत्रुंजयादि तीर्थ विद्यमान ही थे, तो उस समयके श्रावक अवश्य संघ निकालते थे। संघ निकालनेकी परिपाटी नयी और शास्त्रविरुद्ध नही है, यह बात दूसरे प्रश्नमें अच्छी तरह दिखला दी है। हमारी समझमें प्रश्न पूछनेवाले तेरापंथी महानुभाव संघका मतलब ही नहीं समझे हैं। हम पूछते हैं कि-आप लोग पाट उत्सव करते हैं, हजारों आदमी इकट्ठे हो करके आनंद मनाते हो। हजारों श्रावक-श्राविका मिलकरके तुम्हारे पूज्यको बंदणा करनेके निमित्त चातुर्मासमें जाते हो, वहाँ आपस आपसमें खानपानसे भक्ति करते हो। बतलाओ, इसका नाम संघ है कि-नहीं?। क्या तुम्हारे माने हुए संघके ऊपर शृंग होते है?। बडे आश्चर्यकी बात है कि-खुद संघ निकालते रहते हो, और दूसरेको निषेध करते हो। हमें इस बातका जवाब दीजिये कि-किस सूत्रके कौनसे पाठके आधारसे आप लोग उपर्युक्त प्रवृत्ति कर रहे हो?। हमें बडी भावदया आती है कि-सच्चे तीर्थके वैरी हो करके, आप लोग दूसरे रास्ते चले जा रहे हो।

"प्रश्न-४ पाश्र्यांण वो रत्नांरी जिन प्रतामारी अवलतो गत जात ईंद्री कीसी दो यम जिन प्रतमामें जिवरो भेद गुण-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सठांणो और डंडककीसो पावे तीसरी प्रज्याये प्रांण सरीर जोग उप्पीगो कर्म आतमा और लेस्या कीतनी ओर कोंनसी कोनसी पावैः चोथा जिनप्रतिमा शनि या अशनि तस्य या थावर सो ईन कुल वार्ता का उत्तर फरमावैः।

उत्तर-प्रतिमामें गति, जाति, इन्द्रिय, जीवका भेद, गुणस्थानक, दंडक, पर्याय, प्राण, शरीर, जोग, उपयोग, कर्म, आत्मा, लेश्या, सन्नी या असन्नी, त्रस अथवा स्थावर ये बातें पूछनेवाले तेरापंथी महानुभावोंको समझना चाहिये कि नामनिक्षेपोंमें पूर्वोक्त वस्तु जितनी पाई जाय, उतनी ही जिनप्रतिमामें पाई जाती है। जैसे नामको मान्य रखते हैं, वैसे ही स्थापनाको भी माननाही पडेगा। क्यों कि स्थापना जड है। तो क्या नाम जड नहीं है? नामभी जड है। नामको मानकरके भी स्थापनाको नहीं मानना, इसके जैसी अज्ञानता दूसरी क्या हो सकती है? लेकीन ठीक है, जिनके अन्तःकरणोंमें मिथ्यात्वरूप पिशाचने प्रवेश किया है, वे तत्त्वको कैसे देख सकते हैं। देखिये, जैसे नाम और नामवालेका संबंध है वैसे स्थापना और स्थापनावालेका संबन्ध है। नाम माननेवालेको स्थापनाको मान देनाही चाहिये। अकेले नामसे कभी कार्य नहीं हो हकता। जैसे किसी शहेरमें किसीका लडका गुम गया है। उस लडकेके पिताने पोलीसमें यह सूचनादी कि-मेरा केशरीमल्ल नामका लडका गुम गया है। पुलीसकी यह ताकत नहीं है कि-सिर्फ नामसेही उसकी तलास करके उसके पिताको दे दे। चाहे पुलीस भलेही केशरीमल्ल नामके हजार लडकोंको इकट्ठे करे, परन्तु जब तक जो केशरीमल्ल गुम हो गया है, उसकी आकृति वगैरका ज्ञान पुलीसको नहीं हुआ है, वहाँ तक उसका सारा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिश्रम व्यर्थही होगा। वैसे सिवाय प्रतिमा माननेके केवल नामसे काम चलता नहीं है। 'महावीर' इस नामका कई जगह प्रयोग होता है। 'महावीर' हनुमानका नाम है, 'महावीर' सुभटका नाम है। 'महावीर' किसी व्यक्तिका नाम है। और 'महावीर' परमात्मा 'वीर' का भी नाम है। अब 'महावीर' 'महावीर' 'महावीर' ऐसा जाप करनेसे कोई यह पूछे कि—कौनसे महावीरका जाप करते हो, तब यह कहना ही पडेगा कि-ज्ञातपुत्र, त्रिशलानन्दन, क्षत्रीयकुंड ग्राममें जन्म लेने वाले, तथा सात हाथका जिनका शरीर था, ऐसे महावीर देवका जाप करते हैं। जब महावीर देवकी प्रतिमा ही हमारी दृष्टिगोचर होगी, तब हमें विशेष स्पष्टिकरण करनेकी आवश्यक्ता नहीं रहेगी। एक दूसरी बात लीजिए। प्रश्न पूछनेवाले महानुभावोंसे मैं यह पूछता हूं कि—तुम्हारा कोइ साधु, पघडी तथा धोती पहन करके पाटपर बैठ जाय, तो उसको आप साधु कहेंगे या नहीं? क्यों कि प्रतिमा अर्थात् मूर्तिपर जिसका ख्याल नहीं है, उसके लिये तो पघडी पहना हुआ हो, या खुले सिर हो, दोनो एक समान है। नाममें तो फर्क हुआ ही नहीं है। परन्तु नहीं, यही कहना पडेगाकि—वह साधु नहीं है। क्योंकि उसमें साधुका वेष नहीं है—साधुकी आकृति नहीं है-साधुकी मूर्ति नहीं है। कहिये, मूर्तिमानना सिद्ध हुआ कि नहीं?। सज्जनो! निर्विवाद सिद्ध 'स्थापना निक्षेप' का निषेध करके क्यों भवभ्रमण करते हो?। प्रतिमाको उपचरित नयसे साक्षात् जिनवर मान करके कई भक्तजनोंने सेवा-पूजा की है। वह बात चौदवे प्रश्नके उत्तरमें विशेष रूपसे लिखि जायगी। अतएव यहांपर लिखना उचित नहीं समझते।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

महानुभाव ! प्रतिमापर द्वेष होनेसे उलटे प्रश्न करते हो परन्तु वेही प्रश्न जिनवाणी परभी घट शकते हैं । प्रभुजीकी वाणीमें जो पेंतीस गुण थे, वे पेंतीस गुण शाहीसे कागजपर लिखी हुइ वाणीमें नहीं हैं । तथापि स्थापना रूप वाणीको जिनवाणी मान रहे हो तथा अपने बंधुओंको 'चलो जिनवाणी सुननेको' ऐसा कहकर लेजाते हो। भला, कागज और शाही जिसमें शेष रही हुई है, उसको जिनवाणी माननेमें तुम्हें जरा-साभी संकोच नहीं होता है, और जिनप्रतिमाको जिनवर माननेमें पेटमें दर्द होता है, यहकितनी आश्चर्यकी बात है ?

"प्रश्न–५ श्री केवलग्यानी जिनेसर देवमें जीवरो भेद गुणठांणा ओर डंडक कीसो पावै ओर जिनेस्वर देवकी गती जात काया कीसी और जिनैस्वर देवमैः प्रजा प्रांण जोग उप्पीयोग लेश्या आत्मा कीतनी कितनी कोनसी कोनसी पावेंः और जिनेस्वर देव शनि हैं या अशनि है सो उनका उत्र बतीस सासत्रसे दिरावै"

उत्तर–केवलज्ञानी जिनेश्वरमें गर्भज पंचेन्द्रियका एक भेद है । केवलज्ञानी तीसरे शुक्ल ध्यानमें रहें, वहाँतक उनको तेरहवाँ गुणस्थानक होता है । और जब चतुर्थ शुक्ल ध्यानके पायेमें वर्तते हुए शैलेशी अवस्थामें रहें, उस समय चौदहवाँ गुणस्थानक होता है । १४ वे गुणस्थानकमें पांच अक्षरोका उच्चारण करे, उतनेही समय रह करके अन्तिम समयमें समस्त कर्मोंका क्षय करके सिद्ध गतिमें जाते हैं । केवलज्ञानी मनुष्य दंडकमें लाभे । गति निर्वाणकी । जाती पंचेन्द्रियकी । काय त्रयकाय । पर्याय मनुष्यत्वका । प्राण दश होते है, पांच इन्द्रिय, तीनबल, श्वासोश्वास तथा आयुष्य । योग सात १ सत्यमनोयोग, २ असत्यामृषामनो योग, ३ उसी तरह दो वचनके, ४ कार्मणकाययोग (समुद्घा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तके समय) ५ औदारिककाययोग ६, औदारिक मिश्रकाय-योग (समुद्घातके समय) ७, केवलज्ञान तथा केवलदर्शन स्वरूप दो उपयोग होते हैं। तेरहवाँ गुणठाणा हो वहाँतक शुक्ल-लेश्या होती है, चौदहवे गुणस्थानकमें लेश्या नहीं होती। यद्यपि आत्मातो सच्चिदानंदमय है, परन्तु यदि आठ प्रकारके आत्मा-की विवक्षा कीजाय, तो 'कषाय आत्मा' को छोडकरके यो-गात्मा, उपयोगात्मा, ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, चारित्रात्मा, वीर्यात्मा तथा द्रव्यात्मा ये सात आत्मा हैं। अब केवल-ज्ञानी न संज्ञी हैं, न असंज्ञी हैं। क्योंकि-मनइन्द्रियजन्य चेष्टाको संज्ञा कहते हैं। संज्ञा जिसको होती है, वह संज्ञी कहा जाता है। केवली भगवान्को द्रव्यमन है, परन्तु मनइन्द्रियसे कार्य लेते नहीं हैं। अर्थात् उससे भूत-भविष्य-वर्तमानका विचार करते नहीं है। अपने केवलज्ञानसे ही साक्षात् करते हैं। पन्नवणाजीके ३१ वे पदमें केवलीसंज्ञी नहीं तथा अ-संज्ञी नहीं, ऐसा दिखलाया है।

प्रश्न ६-पंचमाहाव्रतधारी छंदमसत मुनीमैं जीवरो भेद गुणठांणों डंडक कीसो कीसो पावै इणांरी गत जात इद्र काया कीसी ओर प्रजा प्रांण शरीर जोग उप्पीयोग आतमा लेश्या कीतनी २ कौंन २ सी पावैः।

उत्तर-छद्मस्थ मुनिको, जीवके भेदमेंसे गर्भजपंचेन्द्रिय मनुष्यका भेद होता है। गुणस्थानक छठेसे बारहवे तक होतें हैं। दंडक मनुष्य दंडक। गति देवलोककी होती है, क्योंकि-पंच-महाव्रत धारी छद्मस्थ मुनिको सम्यक्त्व अवश्य होता है। और सम्यक्त्ववाला जीव वैमानिकके सिवाय दूसरा आयुष्य नहीं बांधता है। कदाचित् पहिले किसी गतिका आयुष्य बांधा हो,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और पीछेसे मुनिपणा अंगीकार किया हो, तो छद्मस्थ मुनि, पहिले आयुष्य बांधा हो, उस गतिमें जाता है, यदि पहिले आयुष्य न बांधा हो तो अवश्य देवलोकमें जाता है। जाति पंचेन्द्रियकी। इन्द्रियमें पंचेन्द्रिय। काय त्रसकाय। पर्याय मनुष्यत्व। प्राण दस होते हैं। शरीर मुख्य औदारिक होता है, पीछेसे लब्धिसे वैक्रिय तथा आहारक कर सकते हैं। भव आश्रयी वैक्रिय शरीर वालेको मुनिपणा नहीं होता है। छद्मस्थ मुनिको योग तेरह होते हैं, कार्मण तथा औदारिकमिश्र ये दो योग नहीं होते हैं। उसका विवेचन इस तरह हैः—

छट्ठे गुणठाणे वाले मुनिको आहारक तथा वैक्रियलब्धि यदि हुई हो तो प्रमत्तगुणठाणेमें ४ मनके, ४ वचनके, १ औदारिक, १ वैक्रिय, १ वैक्रियमिश्र, १ आहारक तथा आहारकमिश्र ये तेरह होते हैं। और अप्रमत्तमें आहारकमिश्र तथा वैक्रियमिश्र दो न होनेसे ग्यारही होते हैं। अपूर्वादिक पांचोंगुणठाणेमें ४ मनके, ४ वचनके तथा १ औरादिक काययोग। यहाँपर अति विशुद्ध चारित्र होनेसे लब्धि हेतुक चार योग नहीं होते हैं। अत एव ९ योग होते हैं। अब यदि छट्ठे गुणस्थानकवाले मुनिको आहारकलब्धि न हो तो ११ योग। वैक्रिय भी न हो तो ९ योग। वैक्रिय न होवे और आहारक होवे तो भी ११ योग होते हैं। सातवेमें मिश्र कम करना। उपयोग सात होते हैंः—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, ये चार तो नियमेन होते हैं। यदि अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ हो तो छे होते हैं। और यदि अवधिज्ञान न हुआ हो और मनःपर्यव ज्ञान हुआ हो तो पांच होते है तथा दोनों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुए हों तो सात उपयोग होते है। छद्मस्थ मुनिको छट्ठे गुणस्थानकसे दशवे गुणस्थानक तक आठों आत्मा होते हैं, ग्यारहवे तथा बारहवे गुणस्थानकवालेको कषाय आत्मा नहीं होनेसे सात आत्मा माने जाते हैं। अब रही लेश्या। छट्ठे गुणस्थानकवाले छद्मस्थ मुनिको तेजो, पद्म तथा शुक्ल ये तीन भाव लेश्या होती है। द्रव्यसे छ लेश्या होती है। यद्यपि चतुर्थकर्मग्रन्थकी ५३ वी गाथामें छे गुणस्थानकमें छ लेश्या लीखी है। छट्ठागुणस्थानकवालाके, दीक्षा लेनेके वाद छ लेश्यामेंसे कोईभी लेश्या हो तो वह आदिकी तीन लेश्या समझनी, परन्तु भावतो ऊपरकी तीनही समझनी। सातवे गुणस्थानकमें तेजो, पद्म तथा शुक्लही होती है। कारण यह है कि-आर्त-रौद्रध्यान नहीं होनेसे अति विशुद्धता होती है। आठवे गुणस्थानकसे बारहवे गुणस्थानक पर्यन्त छद्मस्थ मुनिको एकही शुक्ल लेश्या होती हैं।

प्रश्न-७ ज्ञातासूत्रमैं पांचमा अध्येमें ज्ञानदर्श चात्ररूपी जात्रा कही और आप श्रेतुर्जा वगेरकी जतरा परूपते हो सो कीस सत्राकीरूसे।

उत्तर—ज्ञातासूत्रके पांचवे अध्ययनमें पृष्ट ५७९ में ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप संयमादि रूपी यात्रा कही है। सो ठीक है। उस बातको हम लोग भी मान्य करते हैं। परन्तु इससे शत्रुंजय वगैरहकी यात्राका निषेध नहीं होता है। देखिये, उसी अध्ययनके ५९२ वे पृष्टमें **थावच्चा अणगार**, एक हजार साधुके साथ पुंडरिक पर्वत पर गये हैं। धीरे धीरे उस पर्वत पर चढे। इत्यादि पाठ है। वह पाठ यह हैः—

" तएणं से थावच्चापुत्ते अणगारसह-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्सेणं सद्धिं संपुरिवुडे जेणेव पुंडरीए पव्वये तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छइत्ता पुंडरीअं पव्वयं सणिअं सणिअं दुरुहंति "

अर्थात्—तब हजार अनगारोंसे परिवृत हुए थावच्चापुत्र, जहाँ पुंडरीक पर्वत है, वहाँ आते हैं। आ करके उस पुँडरीक पर्वत पर धीरे धीरे चढते हैं।

अब यह विचारनेकी बात है कि-यदि वह तीर्थका स्थान न होता तो दूसरे अनेक स्थानोंको छोड करके थावच्चापुत्र क्यों वहाँ जाते?। महानुभाव! थावच्चा अणगार जैसे पवित्र, महात्मा, तद्भवमुक्तिगामी पुरुष, जो कि ज्ञान-दर्शन-चारित्र वगैरहरूपी यात्राको मानते हैं, उन्होंने भी पुंडरीक पर्वत पर जा करके मुक्तिका लाभ लिया। अन्यत्र नहीं। शत्रुंजयका ही पुंडरीक पर्वत नाम है। वह नाम, ऋषभदेव स्वामीके पुंडरीक गणधर पांच क्रोड मुनिके साथ चैत्री-पूर्णिमाके दिन मोक्ष गये, तबसे पडा है। यह बात गुरुकुलमें रहनेवाले लोगही जान सकते हैं। परन्तु तुम्हारे जैसे स्वयंभू लोग कैसे जान सकते हैं?। उपमान-उपमेयके नियमसे भी ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूपी यात्रासे अन्य यात्रा सिद्ध होती है।

प्रश्न—८ उत्राधेनरा बारमा अध्येनमें ब्रह्मचरियैरूपी तीरथ वतायो और आप श्रेतुर्जा आदी तीर्थ परूपते हो, सो कीस शस्त्रकी रूसे सो बत्रीस श्रुत्रमें पाठ बतलावो—

उत्तर-उत्तराध्ययन सूत्रके पृष्ठ ३७७ में १२ वे अध्यनकी ४६ वीं गाथामें तुम्हारे कहनेके मुताबिक बात है। परन्तु वहाँ हरिकेशीजीने, ब्राह्मणोंको हिंसा जन्य-कुरुक्षेत्रादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तीर्थसे विमुख करनेके लिये उपदेश दिया है। वहाँ उपमा दिखलाते हुए कहा है:-विनय है मूल जिसका, ऐसा जो धर्म, उस रूपी हृद, और ब्रह्मचर्यरूपी निर्मल तीर्थ, उसमें स्नान करनेसे शुद्धि होती है।

इत्यादि उपदेशसे गंगा-गोदावरी वगैरह तीर्थोंका निषेध किया है। परन्तु शत्रुंजय, गिरनार इत्यादि पवित्र तीर्थोंका निषेध नहीं किया है। ब्रह्मचर्य रूपी जब तीर्थ कहा, तब यहाँ पर उपमान-उपमेय भाव संबन्ध घटाया है। ब्रह्मचर्यको तीर्थतुल्य कहा, तब दूसरा कोई तीर्थ अवश्य होना चाहिये, यह बात अर्थात् सिद्ध होती है। और वह तीर्थ शत्रुंजयादि है ऐसा हमने सातवे प्रश्नमें दिखला दिया है। उसी तरह अंतगडदशांगसूत्रके पृष्ट ९ मैं भी पाठ इस तरहका है:-

"एवं जहा अणीयसे कुमारे, एवं सेसावि अणंतसेणे, अजितसेणे, अणिहिअरिउ, देवसेणे, सत्तुसेणे छ अज्झयणा, एगगमो बत्तीस उदातो, वीसं वासा परियाउ, चोद्दसपुव्वाइं सत्तुंजे सिद्धा"

अर्थात्—जैसे अणीयस कुमारके लिये ऊपर कहा है, वैसे ही दूसरे भी अनंतसेन, अजितसेन, अजीहितरिपु, देवसेन, शत्रुसेन इन मुनिओंके लिये भी जानना, अर्थात् अणीयस वगैरह छे मुनि शत्रुंजय पर्वत पर सिद्ध हुए।

ऐसे २ पाठोंके आधारसे हम शत्रुंजय तीर्थकी प्ररुपणा करते है। ऐसे एक-दो पाठ नहीं, सूत्रोमें शत्रुंजय संबन्धि अनेकों पाठ मिलते हैं। जिस तीर्थपर अनन्त मुनि मुक्ति गये हैं तथा जिसके विषयमें सूत्रोमें स्पष्ट पाठ मिलते हैं. उस

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तीर्थके लिये भी आप लोग प्ररुपणा न करें तो आपके शिरपर 'उत्सूत्रभाषी' पनेका दोष लगेगा, इस बातको विचारो ।

प्रश्न—९ प्रश्नव्याकर्णरा आश्रवदुवार पेलामे देवल प्रतीमा वास्ते प्रथ्वीकाय हणे जीणने मंदबुध्या कहयो तो फीर आप देवल वगेरे कराणेमे धर्म कीस शास्त्रकी रूसे परुपते हो.

उत्तर-प्रश्नव्याकरण आश्रवद्वार पहिलेमें देवकुल, प्रतिमा इत्यादि बहुत चीजें गिनाइ हैं । उन कार्योंको करते हुए पृथ्वीकायकी हिंसा करनेवालेको मंदबुद्धिया कहा है । परन्तु उसके अधिकारी आगे चलकरके अनार्य दिखलाये हैं। पृष्ठ ३२ से ४० तकका अधिकार देखनेसे मालूम हो जायगा। उसमें मंदबुद्धिया मिथ्यादृष्टिका विशेषण है ।

पहिले तो यह दिखलाओ कि आप लोग मंदबुद्धिया किसे कहते हैं ? । क्या कमबुद्धिवालेको मंदबुद्धिया कहते हैं ? यदि ऐसा ही कहेंगे, तब तो केवलीकी अपक्षासे सभी मंदबुद्धिये गिने जायेंगे । परन्तु नहीं, यहां पर रूढ अर्थ लिया गया है । मंदबुद्धिया, मिथ्यात्वीको कहते हैं । समकितदृष्टिजीवकी करणीसे जो हिंसा होती है, उसे हिंसा कही ही नहीं है । और

यदि हिंसा कहोगे तो नीचे लिखी हुई बातोंको करनेवाले, तुम्हारे मन्तव्यानुसार मंदबुद्धिये कहेजायेंगेः—

१ मल्लीनाथभगवान्ने छे राजाओंको प्रतिबोध करनेके लिये२५ धनुष्यकी सुवर्णकी पोली पूतली बनवाई।उसमें आहारके कवल छ महिने तक भरे । उसमें असंख्य जीव उत्पन्न हुए तथा मरे । अत्यन्त बदबू फैली । अब देखिये काम धर्मके निमित्त करते हुए बीचमें अनन्त जीवोंकी हानी हुई, तो तुम्हारे हिसाबसे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मल्लीनाथभगवान् मंदबुद्धियें होंगे।

२ ज्ञाताजीमें सुबुद्धिमंत्रिने, राजाको प्रतिबोध देनेके लिये खाईका दुर्गंधी, जीवोंका पिंडवाला जल, घडेमें वारंवार परावर्त किया। सुगंधी द्रव्य मिलाया, उसमें जीवोंका नाश हुआ। तो उसकोभी मंदबुद्धिया कहना चाहिये।

३ कोणिकराजा वगैरह बडे आडंबरसे प्रभुको बंदणा करनेके लिये गये। बीचमें असंख्याता जीवोंकी हिंसा हुई, तो उनको भी मंदबुद्धिया कहना चाहिये।

४ नदीमें पडी हुई साध्वीको साधु निकाले, उसमें अप्कायके जीवोंकी हिंसा होती है। स्त्री स्पर्शका दोष लगता है, तो तुम्हारे हिसाबसे वह साधुभी मंदबुद्धिया हो जायगा।

इत्यादि बहुतसे ऐसे धर्मके कार्य हैं, जिनमें हिंसा दिखाई देती है, परन्तु वह हिंसा गिनी नहीं जाती। और यहाँ पर जो 'देवमंदिर' तथा 'प्रतिमा' कहे हैं, वे 'जिनमंदिर तथा 'जिन प्रतिमा' नहीं हैं, ऐसा निश्चय सिद्ध होता है। क्योंकि-उसी सूत्रके ३३९ वे पृष्ठमें दयाके नाम दिखलाये हैं। उनमें ५७ वाँ नाम 'पूजा' दिखलाया है। (किसी भी जगह हिंसाकी करणीमें 'पूजा'का नाम नहीं आया) तथा उसी सूत्रके ४१५ वें पृष्ठमें चैत्य-प्रतिमाकी वेयावच्च (भक्ति) करता हुआ साधु निर्जरा करे, ऐसा अधिकार है। इससे भी सिद्ध होता है कि-पूर्वका पाठ अनार्यका है। अनार्यका पाठ ले करके तीर्थंकर महाराजकी पवित्र पूजाका निषेध करनेको तय्यार होते हो, इससे तुम्हारे पर भावदया उत्पन्न होती है। कुछ समझविचार करके लिखो-बोलो जिससे भव भ्रमणता न हो।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रश्न--१० प्रश्नव्याकर्णरा पांचमा आश्रवदुवारमै प्रीग्रहारा नांव चालीया जीणमे प्रतमारो नांव भी सांमल चल्यीयो, ठांणायंगजी तीजे ठांणे प्रिग्रो अनर्थरो मूलकयो तो फेर प्रीग्रासे तीर्णा कस सास्त्रकी रूसे परूपते हो, प्रतिमा प्रतक्ष प्रीग्रामे चाली हैं।

उत्तर-प्रश्न व्याकरणके पांचवे आश्रवद्वारमें परिग्रहके नाम आए। उसमें 'प्रतिमा'का नाम नहीं है। वहाँ 'चेयियाणि' तथा 'देवकुल' ऐसे दो शब्द आये हैं। 'चेयिआणि' शब्दका अर्थ 'चैत्यवृक्षान्' ऐसा करनेको है। क्योंकि-शब्दके अनेक अर्थ होते हैं। अधिकार देखना चाहिये। खैर, तिसपर भी यदि आपलोग 'चेयियाणि' शब्दका अर्थ 'प्रतिमा' करते हैं, और 'देवकुलका अर्थ' 'देवमंदिर' करते हैं, तोभी इससे 'जिनप्रतिमा' तथा 'जिनमंदिर' ऐसा अर्थ नहीं निकलेगा।

अच्छा, अब 'परिग्रह' किस खेतकी चीडीया है? यह भी प्रश्न पूछने वालोंको मालूम नहीं है। दशवैकालिक सूत्रके छठे अध्ययनकी २१ वीं गाथामें कहा हैः-"मुच्छा परिग्गहो वुत्तो इअ वुत्तं महेसिणा" मूर्च्छाहीको परिग्रह कहा है। ऐसा परमात्मा महावीर देव कहते हैं। यदि आप लोग 'प्रतिमा' को परिग्रहमें गिनते हो, तो दिखलाओ, उसके ऊपर किस प्रकारकी मूर्च्छा होती है?। और यदि वस्तु ग्रहण करनेहिमें परिग्रहका दोष लगाते हो तो, तुम्हारे साधु परिग्रहधारी गिने जायेंगे, क्योंकि वस्त्र-पात्र-उपकरण वगैरह रखते हैं। हमें बडा आश्चर्य होता है कि-जहाँ केवल 'वस्त्र'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शब्द मिलता है, वहाँ तो 'प्रतिमा' अर्थ करके जिनप्रतिमाका निषेध करनेको तय्यार होते हो, और जहाँ 'अरिहंतचेइयाणि' शब्द आता है, वहाँ तो दूसराही अर्थ करके मन-मोदक उडानेकी कोशिश करते हो। यह भी तुम्हारी बुद्धिका एक अपूर्व नमूना है।

प्रश्न—११ ठांणायंगजीरे दुजे ठांणे धर्म दोय कया, सूत्रधर्म और चारीत्रधर्म, सो प्रतिमा पूजणेमे वो मंदीर कराणेमे वो संग कडाणेमे कोनसा धर्म है।

उत्तर--ठाणांगके दूसरे ठाणेके पृष्ठ ४९ में धर्म दो प्रकारका कहा:-श्रुतधर्म तथा चारित्र धर्म, ('सूत्रधर्म' यह तो प्रश्नही झूठा है) इन दो प्रकारके धर्म कहनेसे दूसरे धर्मोंका निषेध नहीं होता है। जैसे उसी ठाणांगके १०२-१०३ पृष्ठमें दो प्रकारके बोधी दिखलाए हैं। ज्ञानबोधी तथा दंसणबोधी। तथा दो प्रकारके बुध दिखलाए हैं। ज्ञानबुध-दंसणबुध। तो इससे अन्यबोधी तथा अन्य बुधोंका निषेध नहीं होता है। दूसरे ठाणेमें दो दो वस्तुएं गिनाई हुई हैं। अतएव उसमें भी दोही वस्तुएं लिखी हैं। इसके सिवाय देखीये, तीसरे ठाणेमें अरिहंतके जन्मके समय, दीक्षाके समय तथा केवलज्ञानके समय मनुष्य लोकमें इन्द्र आते हैं, ऐसा अधिकार है, तो इससे क्या निर्वाणके समय तथा च्यवनके समय इन्द्र नहीं आते हैं, ऐसा सिद्धि होता है? कदापि नहीं। पांचो कल्याणकके समय इन्द्र आते है। इस तरह दो या तीन वस्तुएं गिनानेमे अन्य वस्तुओंका अभाव या निषेध समझ लेना, यह बडी भूल है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रतिमापूजनी, मंदिर कराना तथा संघ निकालना ये दर्शनधर्ममें कहे जाते हैं । जरा आँखे खोल करके तीसरे ठाणेमें पृष्ठ ११७ वाँ देखो, उसमें लिखा है कि-जिन प्रतिमाकी तरह साधुकी भक्ति करता हुआ जीव शुभ दीर्घायुष्य कर्मको उपार्जन करता है ।' वह पाठ इस तरह हैः—

"तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउअत्ताए कम्मं पगरेंति । तं जहा णो पाणे अइवाइत्ता हवइ, णो मुसं वइत्ता हवइ तहारूवं समणं वा वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता कल्लाणं मगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेत्ता मणुन्नेणं पीइकारएणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेत्ता हवइ इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउअत्ताए कम्मं पगरेंति ।"

अर्थात्—तीन स्थानों करके जीव शुभ दीर्घ आयुष्य कर्म उपार्जन करता है । वे तीन स्थान ये हैंः-प्राणोंको नहीं मार करके अर्थात् जीवदया करके झूठा नहीं बोल करके अर्थात् सत्य बोल करके और तथारूप दयालु श्रमणको वन्दणा करके-नमस्कार करके-सत्कार दे करके-सम्मान दे करके तथा कल्याण-मंगलके निमित्त जिनप्रतिमाकी तरह उस श्रमणकी पर्युपासना करके तथा उस श्रमणको मनोज्ञ-प्रीतिकारक अशन-पान खादिम-स्वादिम आहार देकरके-प्रतिलाभ देकरके जीव शुभ दीर्घायु उपार्जन करता है ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

देखो, इस पाठमें जब जिन प्रतिमाकी उपमाही दी, तब जिन प्रतिमाकी पूजा स्वतः सिद्ध हुई।

प्रश्न—१९ उत्राधैनरा २८ मा अधनेमै ३६ मी गाथामे कर्म खपाणवरी करणी २ केही, एक तप दुसरे संजमः सो प्रतिमा पूजने वो मंदिर कराने वो सीगकडानेमें कांनसी करणी हुई।

उत्तर—उत्तराध्ययनके २८ वे अध्ययनकी ३६ वीं गाथामेंसे कर्म खपानेकी करणी तप तथा संयम दोही कहते हो, वह ठीक नहीं है। क्यों कि-उसके ऊपरकी याने ३५ वीं गाथामें कहा है किः—

"नाणेण जाणइ भावे दंसणेण य सद्दहे।
चरित्तेण निगिण्हाइ तवेण परिसुज्झइ' ॥ ३५ ॥

दिखलाये। और आपलोग ३६ वीं गाथासे कर्म खपानेकी करणी दो कहते हैं। यह सरासर सत्य विरुद्ध है। उसी गाथासे चार करणी निकलती है। देखिये, उस गाथामें 'खवित्ता पुव्व कम्माइं संजमेण तवेण य' ऐसा पद है। इसमें 'य' याने 'च' शब्द रक्खा हुआ है। 'च' शब्दसे ज्ञान-दर्शनको ग्रहण कर लेना चाहिये। अगर वैसे न किया जाय, तो 'ज्ञान-दर्शन-चारित्रकी त्रिपुटीकी विद्यमानतामें मोक्ष होता है' यह बात अन्यथा हो जायगी। 'दर्शन' शब्दके आनेसे भगवान्की आज्ञाकी सद्दहणा आजाती है। और जहाँ भगवान्की आज्ञा है, वहाँ प्रतिमाको पूजना, मंदिर कराना तथा संघ निकालना वगैरह करणी आही जाती है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रश्न—१३ दशवैकालकरा पेला अधेनरी पेली गाथामे 'अहिंसा संजमो तचो' कयो ओर सुगडायंगजीरे पेले अध्येनमे चोथे उद्देशे गाथ १० में ये बात केही जीन करणीमें कींचीत्त-मात्र हींश्या नही ताकी करणी ज्ञांनरो सारकेयो ओर आप देवल प्रतीमाकी ध्रव पूजा करणेमे वो संग कडानेमैं जीव हंश्या करणेमे दोस नही परुपते हो सो प्रतक्षे हंस्या होती हैं ओर श्री जिनेस्वरदेवने उपर लीखी यै सासत्रांमैं हंश्या कर्ण साफ मनाई की हैं ।

उत्तर—दशवैकालिककी पहली गाथा तथा सूयगडांग-सूत्रके पृष्ठ ९५ में पहेले अध्ययनके चतुर्थ उद्देशेकी १० वीं गाथा तथा ग्यारहवे अध्ययनमें (पृष्ठ ४२६ में) दशवीं गाथामें 'किंचित्मात्र हिंसा न करनी' यह ज्ञानीका सार कहा है (ज्ञानकासार कहना भूल है), यह बात हमको सर्वथा मान्य है। इस बात पर सर्वथा अमल भी होता है। क्यों कि तीर्थंकरकी आज्ञामें धर्म है। जहाँ जहाँ तीर्थंकरकी आज्ञा है, वहाँ वहाँ धर्म ही हैं। तीर्थंकर महाराजने अनुकंपा लाकरके गोशाले जैसे शिष्याभासको बचाया। मेघकुमारने ससलाके जीवको बचाया (देखो ज्ञातासूत्र), परन्तु अफसोसकी बात है कि—आप लोग पूर्व कर्मके उदयसे सत्य बातको भूल करके, असत्यमें फँस गयें हों। हिंसा-अहिंसाका स्वरूप भी अभी तक नहीं समझ सके हो। उववाई सूत्रमें कोणिकराज बडे आडंबरसे चतुरंगी सेनाके साथ प्रभुको बंदणा करनेके लिये गये, उसकी साख, भगवती सूत्रके तेरहवे शतकके छठे उद्देशेमें उदायनके पाठमें "जहा कोणिओ उववाइए जहा पज्जुवासं" ऐसा कह करके गणधरोंने दी है। उस पुरावेको देख करके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अनेक राजे-महाराजे-शेठ-शाहुकार, आचार्य उपाध्यायादिको वंदणा करनेके निमित्त गये हैं। ऐसा बहुत सूत्रोंमें देखनेमें आता हैं। अब तुमारे आशयसें तो गणधर महाराजा पापका उपदेश देने वाले हुए। इसके सिवाय आचारांगसूत्रमें कहा है:-साध्वी नदीमें गिर गई हो तो साधु खुद नदीमें गिर करके उसको निकाले, तो उसमें बहुत लाभ कहा है। कई साधुओंने उस तरह निकाली हैं, निकालते हैं तथा निकालेंगे। एसा करनेमें मुनिओंने असंख्य अप्काय हणे हैं, हणते हैं तथा हणेंगे ऐसा उपदेश तीर्थंकर-गणधरोंने किया हैं, तो तुम्हारे हिसाबसे 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं' का तथा सूयगडांगसूत्रका पाठ कहाँ रहा? कदाचित् यह कहेगा कि-साध्वीके निकालनेका लाभ, हिंसासे अधिक है, तो बस उसी तरह समझलो कि-जिन पूजादिक दर्शन शुद्धिकी करणीमें हिंसासे लाभ अधिक है। गोचरी गया हुआ साधु, महामेघकी वृष्टि होती हो-वृष्टि शान्त न होती हो तो आती हुई वर्षामें भी अपने स्थानपर आजाय। एसा उपदेश आचारांग, निशिथ तथा कल्पसूत्रमें दिया है। उस पाठके आधारसे कई मुनि आए हैं आते हैं और आवेंगे। अब उसमें अप काय बेइंद्रिय तेरिन्द्रिय जीवोंकी विराधना होती हैं तो उस-पाप तुम्हारे हिसाबसे उन उपदेश देने वालेंके सिर होना चाहिये अच्छा और देखिये। तीर्थंकर महाराजने दो अगुंलीओंमे चपटी बजानेमें असंख्य जीवोकी विराधना कही है तो सूर्याभदेवने बत्तीस प्रकारके नाटक किये, वही सूर्याभदेव समकितवंत है इत्यादि बहुत वर्णन किया है, उसके आधारसे वर्तमान भी लोग, भगवान्के सामने नाटक करते हैं। भगवान्ने सूर्याभदेवको निषेध नहीं किया। तो तुम्हारे हिसा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बसे भगवान्ने हिंसा करवाई एसा ठहरेगा । मुनि चातुर्मास रहे और यदि अप्रीति-अशिवादि कारण हो जाय तो चातुर्मासमें भी विहार करे खुद प्रभु वीरने भी चातुर्मासमें विहार किया है । उस तरह ऐसे कारणोंमें वर्तमान समयमें भी विहार करते हैं । तो उसके दोषके भागी तुम्हारे हिसाबसे उपदेश देनेवाले तीर्थंकर-गणधरादि ही होंगे ।

ऐसे २ कई स्थानोंमें भविष्यके बडे लाभके लिये प्रभु तथा गणधरोने आदेश-उपदेश किया है । परन्तु महानुभावो! पूर्वोक्त कारणोमें स्वरूप हिंसा है, अनुबन्ध हिंसा होती है, वहाँ ही उत्तरकालमें दुःख होता है, दशवैकालिकसूत्रमें तथा सूयगडांगसूत्रमें अहिंसाधर्मकी प्ररूपणाकी हुई है । वह सर्वथा सबको मान्य है, परन्तु उसको यथार्थ स्वरूपको नहीं समझ करके एकान्त पक्षको स्वीकार करनेवाले जैनदर्शनसे बाहर हैं । क्यों कि मुनिराजोंने, अरिहंत-सिद्ध-साधु-देव तथा आत्माकी साक्षीसे पंचमहाव्रत स्वीकार करनेके समय मन-वचन-कायासे, नव प्रकारके जीवको हणुं नहीं, हणावुं नहीं, तथा हणे उसको अच्छा न जानुं, ऐसे ८१ भांगेसे 'प्राणातिपातविरमण' व्रत लिया है तथापि आहार-निहार-विहार-व्याख्यान धर्म चर्चा, गुरुभक्ति तथा देवभक्ति वगैरह क्रियाओमें हिंसा होती है । परन्तु इन कार्योंमें अत्युत्तम निर्जरा होनेसे उसको हिंसा मानी नहीं है । यदि हिंसा मानली जाय तो ८१ भांगेमें दुषण आनेसे मुनिओंको हजारो कष्टक्रिया करनेपर भी दुर्गतिमें जानेका समय आवे ।

प्रश्न-१४-जिनप्रतिमा श्रीजिनसारसी परूपते हो सो बत्तीस सासत्रमें कांहीका हो तो पाठ बतलायें-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उत्तर-जिनप्रतिमा जिनसमान है, तत्संबंधि रायपसेणी सूत्रके १९० पृष्टमें 'धूवं दाउणं जिणवराणं' ऐसा पाठ है। तथा जीवाभिगम सूत्रकी लिखी हुई प्रति (जो आचार्य महाराजके पास है) के १९१ वे पृष्टमें भी वही पाठ है। इस पाठका मतलब यह है कि-जिनवरको धुप दे करके। इसमें मूर्तिको जिनवर कहा, इससेही सिद्ध होता है कि-जिनप्रतिमा जिन समान है। इसके शिवाय ज्ञातासूत्रके-१२५५ वे पृष्ठमें 'जेणेव जिणघरे' ऐसा पाठ है। यहाँपर भी जिनप्रतिमाके घरको जिनघर कहा है। इत्यादि बातोंसें जिनसमान कहनेमें जराभी आपत्ति नहीं आती है।

प्रश्न-१५ आचारंगरे पेला अध्येनरा पेला उद्देशामें केयोके जीवरी हंस्या कियां जनममरणरो मुकावोपरुपे तीणने अहेत अबोधरो कारण केयो तो फेर आप धर्म देवरे वास्ते हंस्या करणेका उपदेश केम दीराते हो।

उत्तर-आचारांग के पहिले अध्ययनके पहिले उद्देशेमें तुम्हारे पूछे मुताविक प्रश्नका पाठ नहीं है। अतएव उत्तरही देनेकी आवश्यक नहीं है। तथापि तुम्हारे पर दया आनेसें तथा तुम्हारी भूल सुधारनेके लिये दूसरे उद्देशेका पाठ, जोकि तुम्हारे पूछे हुए प्रश्न संबंधि है, यहाँ दे करके यथार्थ अर्थ दिखलाता हुँ। देखों, वहपाठ पृष्ठ २९ में यह है:-

"इमस्स चेव जीविअस्स परिवंदणमाणण पूअणाए, जाइ-मरण-मोअणाए दुक्खपडिग्घायहेउं से सयमेय पुढविसत्थं समारंभइ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अण्णेहिं पुढविसत्थं समारंभावेइ, अण्णेवा पुढविसत्थं समारंभते समणुजाणइ तं से अहिआए तं से अबोहिए"

इसका भावार्थ यह है:—इस जींदगीके परिवंदन मान तथा पूजाके लिये जाति-मरण और मोचनके लिये तथा दुःखके प्रतिघातके लिये जो स्वयं हिंसा करे, अन्यके पास करावे, तथा करनेवालेको अच्छा जाने वह कार्य अहित तथा अबोधके लिये होता है।

यह उसका अक्षरार्थ है इसमें तुम्हारे प्रश्नसे उलटाही प्रतिभास होता है। तुम लिखते होः—जीवरी हंस्याकियां जनम-मरणरो मुकावों परूपे तीणेन अहेत अबो धरो कारण केयो'। यह बाततो स्वप्नमें भी नहीं है। महानुभाव! सूत्रके असल—वास्तविक अर्थ जानने चाहते हो, तो व्याकरणादिका अभ्यास करो। पश्चात् सूत्रके अर्थ समझनेका दावा करो, पूर्वोक्त पाठमें अपने स्वार्थके लिये हिंसा करने वालेको, हिंसा अबोध तथा अहितके लिये कही है। परिवंदन याने कोई वांदे नहीं तब क्रोध करके अन्यको पीडा करे। वैसेही मान तथा पूजामें भी समझना। इस तरह जाति—जन्म उत्तम मिले, वैसे आशयसे कुदेवोंको वंदणा करे, जलदी मृत्यु न हो, ऐसी आशासे अभक्ष्य—मांसादि खानेकी प्रवृत्ति करे। तथा करने वालेकी अनुमोदना करे, उसको अहितके लिये तथा अबोधके लिये कहा है। हम लोग जो उपदेश देते हैं, वह हिंसाके लिये नहीं परन्तु धर्मदेवकी भक्तिके लिये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रश्न-१६ आचारंगरे चोथा अध्येनरे पेला उदेशामे कयोके धर्म रहे ते सर्व प्राण भूत सत्व जीवको ही मत हणो, अेतीनकालरातीर्थंकरांरा वचन हैं तो फेर देवल वगेरे कराणेमे इण ससात्रके खीलाप धर्मकेशे परूपते हो-

उत्तर-भूत-भविष्य तथा वर्तमान तीर्थंकर महाराजाओंने हिंसाका निषेध किया, सो बराबर है। परन्तु धर्मके निमित्त समस्त जीवकी-समस्त प्राणीकी हिंसा नहीं करनी, ऐसा वचन नहीं है। तीसपर भी आप लोग ऐसे मनःकल्पित प्रश्न उठाते हैं। यही तुम्हारी बुद्धिका रहस्य झलक रहा है। यदि तीर्थंकरोंके वचन वैसे मिले, तो तीर्थंकर महाराज गौतम स्वामिको, देवशर्मा ब्राह्मणको प्रतिबोध करनेके लिये क्यों भेजते? आनन्द श्रावकके पास अवधि ज्ञान संबंधी 'मिच्छामिदुकडं' देनेको क्यों भेजते? 'गौतम! मृगालोढियाको देखआवो' ऐसा क्यों कहते?' गौतम! मालयकच्छमें सिंहाअनगार रोता है, उसको समझाकर बुला लाओ, ऐसा क्यों कहते?। क्योंकि-उपर्युक्त कार्योंमें जीवविराधना होनेका संभव है परन्तु वह आज्ञा भगवानने धर्मके निमित्तकी है। इसके सिवाय गोचरीके लिये भी भगवान् आज्ञा देते हैं। देखिये, उपासक दशांगके पृष्ठ ७२ का पाठः-

" इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए छट्ठक्खमणपारणगंसि वाणिअगामे नयरे उच्चनीअमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खाअयरि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आए अडित्तए अहासुहं देवाणुपिया ! मा पडिबंधं करेहि ।"

अर्थात्-हे भगवन् ! आपसे अनुज्ञात हुआ मैं बेलेके (दो उपवासके) पारणेके लिये वाणिज्यग्रामनगरमें गोचरी लेनेको जाऊं, ऐसा चाहता हूँ। तब भगवान्ने कहाः-' हे देवानुप्रिय ! विलंब मत करो '।

इत्यादि कई जगह धर्मके निमित्त भगवान्ने ऐसा कहा है। उसी तरह देवमंदिरादि धर्मकृत्योंका उपदेश देनेमें किसी प्रकारकी हानी नहीं है।

प्रश्न—१७ आचारंगरे चोथे अध्येन दुज उदेशेकेयोके धर्म हेते सर्व प्रांण भूत जिव सत्वं हणीयां दोस नहि कवै, तीकै वचन अनारजना छै तो फेर आप इण पाठरे खीलाप प्रतिमा पूजणेमें धर्म केसे परूपते हो, कीउके प्रतिमाकी द्रव्य पूजा कर्णेमें प्रत्यक्ष जीवहिंसा होती है।

उत्तर--आचारांगके चोथे अध्ययनके दूसरे उद्देशेमें जो पाठ है, वहाँ ' हिंसा करनेमें दोष नहीं है ' ऐसे बोलनेवालेके वचन अनार्यके वचन हैं। तथा 'दया पालनमें दोष नहीं है ' यह वचन आर्यका है। इस मतलबका जो पाठ, प्रश्न पूछनेवाले महानुभाव दिखलाते हैं। वह पाठ असलमें ऐसा सूचित नहीं करता है कि-' धर्मके निमित्त हिंसा करे तथा धर्मके निमित्त हिंसा करनेवाला दोषवाला है, उस पाठमें ऐसा भाव बिलकुल नहीं है। देखिये, आचारांगके २३० वे पृष्ठमें वे दोनों पाठ इस तरह हैः—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

" भो जं णं तुब्भे एवमाचक्खह, एवं भासह, एवं पण्णवह, एवं परूवह,-सव्वे पाणा सव्वे भूआ, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, हंतव्वा, अज्जावेयव्वा, परियावेअव्वा, परिघाएअव्वा, किलामेअव्वा, उद्दवेअव्वा, एत्थ वि जाणह नत्थेत्थ दोसो अणायरियवयणमेअं. "

वयं पुण एवमाइक्खामो, एवं भासामो, एवं परूवेमो, एवं पण्णवेमो, सव्वे पाणा, सव्वे भूआ, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, न हंतव्वा, न अज्जावेतव्वा, न परियावेअव्वा, न परिघाएअव्वा, न किलामे अव्वा, न उद्दवेअव्वा, एत्थवि जाणह नत्थेत्थ दोसो आयरियवयणमेअं. "

ऊपर जो दो पाठ दिये गये हैं, उसमें पहिले पाठमें जैनेतरोंका वचन है, दुसरे पाठमें जैनमुनियोंका वचन है, पहिले पाठमें यदि धर्मका अध्याहार [ऊपरसे धर्म] लिया भी जाय, तो भी वह पाखंडीओंका ही धर्म लेना। परन्तु समकितवंत जीवोंका नहीं। दूसरे पाठमें धर्म लेनेकी आवश्यकता ही नहीं है। इसके सिवाय इसी सूत्रके प्रथम श्रुतस्कंधके २२४ वें पृष्ठमें 'जो आस्रव वह परिस्रव तथा' 'जो परिश्रव वह आस्रव' कहा है। परिश्रव कर्म निर्जराका नाम है। वहाँ समकितवंतका आस्रव, निर्जरारूप होता है। अज्ञानीका संवर वह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आस्रवरूप होता है। तथा 'जो अनास्रव' वे अपरिस्रव और 'जो अपरिस्रव वे अनास्रव कहे हैं'। अनास्रव व्रतादि अशुभ अध्यवसायके कारणसे होते हैं। अपरिस्रव पापके कारणभूत होते हैं। निर्जराके कारण नहीं होते। जो अपरिस्रव याने पापके कारण है, वे अनास्रव याने निर्जराभूत होते हैं वीरपरमात्माके शासनके लिये तथा संघके लिये अनेक शुभ हेतुसे होते हुए पाप भी निर्जराके कारण होते हैं। देखिये आचारांगसूत्रके पृष्ठ २२४ में इस तरह पाठ हैं:—

जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा, जे अणासवा ते परिस्सवा जे अपरिस्सवा ते अणासवा।"

इस पाठका अर्थ हम उपर ही दे आए हैं।

प्रश्न—१८ आचारंगरै चोथा अध्येनरे दुजा उदेशेमे धर्म-हेते प्रांणभूत जीवसत्वं हणीयां दोसकेवै तीके वचन आरजना छै तो फेर आप धर्मरे कारण हंस्या करणेमें दोस केशे नहीं परूपते हो।

उत्तर—इस प्रश्नका उत्तर सतरहवे प्रश्नके उत्तरमें ही आजाता है। वह पाठ भी सतरहवे प्रश्नमें दे दिया है। धर्मके निमित्त होती हुई करणीमें निर्जराही हैं। यह बात कई प्रश्नोंके उत्तरमें दिखला दी है। अत एव यहाँ विशेष स्पष्टीकरण करनेकी आवश्यक्ता नहीं है।

प्रश्न १९—आचारंगरे आठमे अध्ययनमें श्रीभगवंत महावीर देव ठंडो आहार गणादीनोंरो नीपजीयो डोलीयो चाली-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

योने आप ठंडा आहार लेणेमे मनाई परूपते हो, सो कीसी सा-स्त्रके अनुसार भरजीयो वे तो बतलाइये

उत्तर—आचारंग सूत्रके आठवे अध्ययनमें भगवान् महा-वीरदेवने बहुत दिनोंका ठंडा आहार लिया, वैसा आहार नहीं है। परन्तु प्रथम श्रुतस्कंधके नववे अध्ययनके चतुर्थ उद्देशेमें इस तरहका पाठ है:—

अविसूईयं च सुक्खं वा वातिपिंडं पुराणकुम्मासं अदुबक्कसं पुलागंवा लद्धे पिंडे अलद्धएदविए ॥

भावार्थ—दहींसे भींजाया हुआ भक्त (भोजन) तथा सूखे वालचने जो कि भूजे हुए हों, तथा वासी याने ठंडा भक्त (भोजन) जो सुवहसे तीसरे प्रहर तकका हो, अथवा वासी याने पर्युषित पुराणा उडदका भक्त चिरंतन धान्यका भोजन अ-थवा बहुत दिनोका सत्थु (साथवा), गोरस तथा गेंहुकामांड उनमेसे कोईभी प्राप्त हो, परन्तु भगवान् राग द्वेष रहित हो हुए ग्रहण करे।

अब यहाँ तेरापंथी महानुभाव, अपनी पकडी हुई बातको सिद्ध करनेके लिये अनेक प्रकारकी कोशिश करते हैं। परन्तु उन लोगोंको वास्तविक मतलब नहीं प्राप्त होनेसे स्वयं अभक्ष्यी होकर, अन्यको भी अभक्ष्यी करनेके लिये अर्थके अनर्थ करते हैं। 'भात' शब्द जहाँ जहाँ आता है, वहाँ वहाँ वहाँ 'भोजन' अर्थ करनेका है। देखिये आज कलभी पुराणाही रिवाज चला आता है जैसे कोई स्त्री क्षेत्रमें भोजन देनेको जाय, और उससे अगर कोई पूछे कि-कहाँ जाती हो? तो वह यह कहेगी कि-'मैं भात देनेको जाती

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हूँ। यहाँपर चाहे कोइ भी चीज लेजाती होगी, परन्तु उसको भात ही कहेगी। उडदका चावल होता है, ऐसा किसी जगह जाननेमें नहीं आया। तब जैसे जवका सत्थु (साथुआ) होता है, वैसे उडद वगैरहका सत्थु इत्यादि समझ लेना। मगध देशमें सत्थुका प्रचार बहुत था। अभी भी है। नाना प्रकारका सत्थु मिलता है। मैं उस देशमें विचरा हूँ। मुझे इस बातका जाति अनुभव है। बहुत दिनोंका सत्थु देनेमें वासीका दोष नहीं है आचारांगसूत्रमें अनेक प्रकारके चूर्ण सत्थु इत्यादिका वर्णन चला है।

हमें बडा आश्चर्य होता है कि–आप लोग टीकाको मानते नहीं है, तिसपर भी जहाँ तुम्हारे मतलबकी बात आती है, वहाँ तो फोरन टीकाका शरण लेते हो, परन्तु टीकाका रहस्य भी, सिवाय गुरुके नहीं मिल सकता। वासीका अर्थ पर्युषित भक्त करनेसे तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होनेवाला नहीं है। क्यों कि–पर्युषित दो प्रकारके होते हैं। भक्ष्य तथा अभक्ष्य। 'पर्युषित' शब्दका अर्थ 'रातका रहा हुवा भक्त' ऐसा होता है। उसमें ऐसा नहीं है कि–स्नेह सहित या स्नेह रहित। अत एव भक्ष्य अभक्ष्य दोनोंका ग्रहण होता है। इनमेंसे जो भक्ष्य चीजें होती है, वेही भगवान् तथा भगवान्के अणगार–साधु लेते हैं। अभक्ष्य चीजें लेते नहीं है। सूत्रमें ऐसेभी पाठ हैं कि–चलितरस, जिसमें लिलण-फूलण आगई हो तथा रूप-रस-गंध स्पर्श बदल गया हो, वैसा आहार लेना नहीं। महानुभाव! आप लोगोंको चलित रसका ज्ञान दूरसे होनेवाला नहीं है!

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लीलण-फूलण पांच प्रकारकी है। तद्वर्ण लीलण-फूलण तुम्हारेसे जानी नहीं जायगी। अत एव सिद्धि सडकको छोड करके उल्टे मार्गपर न चलो। ज्ञातासूत्रके पृष्ठ ६०० में आहारका अधिकार है। उत्तराध्ययनसूत्रके २४९ वे पृष्ठमें आठवे अध्ययनकी बारहवीं गाथामें भी अधिकार है। परन्तु वहाँ किसी स्थानमें बहुत दिनोंका आहार लेनेको नहीं कहा है। जहाँ 'पुराणा' कहा है। वहाँ उडदका भात कहा है। अत एव जल रहित चूर्ण लेनेमें हानी नहीं है। जिस परमात्माको भूत-भविष्य तथा वर्तमानकालका निर्मल ज्ञान था। ऐसे परमात्माने जिस समय सूक्ष्मदर्शकादि यन्त्रोके साधन नहीं थे, ऐसे समयमें अपने ज्ञानके द्वारा समस्त वनस्पतिमें, जलमें, तथा कंदमूल वगैरहमें; जीवोत्पत्ति दिखलाई है। यह बात आजकल सायन्स विद्यासे—डाक्टरी नियमसे तथा आयुर्वेदादिसे सिद्ध होती है। देखिये, आजकलके जमानेमें सायन्सवेत्ता, डोक्टर लोग तथा वैद्य लोग भी पयुर्षित अन्न खानेका निषेध किया करते हैं। वैष्णव लोग भी स्नेहयुक्त पर्युषितान्नको त्याग करते हैं। देखिये मनुस्मृतिके पांचवे अध्याय, पृष्ठ १८३ में कहा है।

'यत् किञ्चित् स्नेहसंयुक्तं भक्ष्यं भोज्यमगर्हितम्।
तत्पर्युषितमप्याद्यं हविःशेषं च यद् भवेत् ॥२४॥
चिरस्थितमपि त्वाद्यमस्नेहोक्तं द्विजातिभिः।
यवगोधूमजं सर्वं पयसश्चैव विक्रिया ॥ २५ ॥

भावार्थः—जो लाडु वगैरह, थोडे स्नेहयुक्त, कठिन, कोमल तथा बिगडा हुआ नहीं है, वह खाने लायक है। तथा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होमसे बचा हुआ, जो पर्युषित है, वह भी खानें लायक है।

बहुत कालसे रहा हुआ, स्नेह रहित जो यव, गोधुमसे उत्पन्न हुआहो तथा दूधका विकार जो मावादि (खुआ) होता है, वह ब्राह्मणोंकों खाने लायक है।

उपर्युक्त दोनों श्लोकोंमें भक्ष्य-पर्युषित खाने लायक दिखलाया। उसमें स्पष्ट लिखा हुआ है कि-जिसमें जलका भाग न हो, वह खाने लायक है। वही बात तत्त्ववेत्ता जैनाचार्य भी कहते हैं। तथापि तेरापंथी लोग मनमाने अर्थ करके भगवान्की वाणीको सदोष बनाते हैं।

परन्तु महानुभावो! जमाना दूसरी तरहका है इस समयमें तुम्हारे मनःकल्पित अर्थ, विद्वानोके आगे चलने वाले नहीं हैं। 'पर्युषितान्नं त्यजेत्' इत्यादि वाक्य जैन तथा जैनेतर शास्त्रमें स्पष्ट दिख पडतेहैं। रात्रिका रहा हुआ जलवाला पदार्थ रोटी, चावल,दाल,खीचडी,शाक वगैरह पदार्थ अभक्ष्य समझना चाहिये। जिसमें जलका भाग रहा नहीं है, ऐसे पदार्थ, दिखलाए हुए कालानुसार भगवान्ने भक्ष्य कहे हैं। उसी तरह हम लोक निंदनीय सजीव वासी चीजें लेते नहीं हैं। आप लोग भी वैसा ही करेंगे तो भगवान्की आज्ञाके आराधक हो कर आत्मश्रेय करनेके लिये भाग्यशाली होंगे।

प्रश्न-२० पेला छेला जीनेस्वर देवांरा सादांरे सर्व सपेदवर्णरा कपडा आया है और आप पीला कपडा पेनते हो और रंगते हो सो कीस शास्त्रकी रुहसे।

उत्तर-पहिले तथा अन्तिम तीर्थंकर महाराजका कल्प अचेलक है। जीर्ण-तुच्छ वस्त्रका परिधान होनेसे अचेलक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

माना है। तीसपर भी तुम्हारे (तेरापंथीके) साधु नये-स्वच्छ तथा रेशमीकपडे पहनते हुए देखनेमें आते हैं, और उनको अचेलक कहते हो, इसका क्या कारण? कारण विशेषमें कपडेको रंग देनेकी आज्ञा हमारे माने हुए सूत्रोंमे मौजूद है। इससे हम लोग रंगा हुआ कपडा रखते हैं, उसमें न दोष है, न आज्ञाका भंग है। 'न धोना न रंगना' यह जो कहा है, वह सफाई या शौकके आशयसे कहा है। विशेष लाभके लिये तो खास आज्ञा दी हुई है।

प्रसंगानुरोध यह भी कह देना समुचित समझा जाता है कि-पक्षपातको छोड करके व्यवहारिक रीतिसे देखा जाय तो यतना पूर्वक परिमित जलसे वस्त्रप्रक्षालनमें फायदा ही है। पूर्व ऋषि-मुनिराजोंका संघयण तथा पुण्य प्रकृति और ही प्रकारकी थी, जिसके कारण दुर्गंधी तथा यूकादि नहीं पडते थे। आजकल छेवठा संघयण होनेसे मलीन वस्त्रोंमें दुर्गंधी हो जाती है तथा यूकाएं (जू) बहुत पडती हैं। आजकल तुम्हारे (तेरापंथिओंके) अनेकों साधु, कपडोंमेंसे जू निकालते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। उन जूओंको पैरोमे बांध रखते हैं, जिससे विशेष दोषका कारण होता है। वे जूएं कई गृहस्थोंके घरमें पडती हैं, बहुतसी रास्तेमें गिरति हैं, तथा उपाश्रयमें तो गिरती ही रहती है। जू तीन इन्द्रियवाला जीव है, तो ऐसे तीन इन्द्रिय जीवोंकी इतनी विराधना न करके, फासुजल उपलब्ध हो, उससे यतना पूर्वक कपडे साफ किये जाँय, तो कितना दोष या लाभ होता है? इस बातका विचार करनेमें आवे, तो एकान्तवाद हट करके स्याद्वादकी सीधी सडक प्राप्त हो सकती है। इतनाही प्रसंगसे कह करके अब मैं मूल बातपर आता हूँ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कपडे रंगनेका कारण, जो यति शिथिल हुए थे, उनसे भेद दिखलानेका ही है। और वह भी शास्त्रयुक्त ही है। न कि मनःकल्पित। देखो, आप लोग (तेरापंथी) स्थानकवासिओंसे अलग हुए, तब स्थानकवासिसे विलक्षण मुहपति बांधनी शुरुकी। और वह भी मनःकल्पित, नकि शास्त्र प्रमाणसे। तिसपर भी झूटेको झूटा समझते नहीं हो। और जिन्होंने सकारण, सशास्त्र, नायकोंकी सम्मतिसे कपडे रंगनेका कार्य किया है, उसमें दोष देखते हो। यही तुम्हारा जाति स्वभाव दिखाई दे रहा है।

प्रश्न--२१ श्रीजिनेस्वर देवने दशमिकालकरा सातमा अध्येन गाथा ४७ मी मे कयोके साधु होकर असंयतीको आवजाव उभोरे बेस सुकांम कर इत्यादिक छ बोल केणा नहीं तो फेर समेगीजी साधुजी ग्रहस्ती पर बोज कीस शास्त्रकी रूसे देते हैः

उत्तर--श्रीदशवैकालिकसूत्रके सातवे अध्ययनकी ४७ वीं गाथामें जो बात कही है, वह सर्वथा मान्य है, फिर चाहे तेरापंथी हो, स्थानकवासी हो या संवेगीसाधु हो। जो साधु, गृहस्थके शिरपर बोझा देता है, वह साधुकी क्रियामें दोष लगाता है। संवेगी साधु, अपने उपकरण गृहस्थके शिरपर देते नहीं हैं। और कदाचित् कोई शिथिल साधु देता हो, तो इससे सबके शिरपर दोष लगाना, द्वेषका ही कारण है। देखिये, जो रुपिया जितना घिसा हुआ होता है, उसका उतना ही वटाव लगता है। परन्तु वह रुपया सर्वथा तांबेका गिना जाता नहीं है। इसी तरह जिसमें जितनी न्यूनता होती है, उसमें उतनी ही न्यूनता गिनी जाती है कंचन ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कामिनीका सेवन करनेवाला साधु भावसे विमुख होता है। महानुभाव! आप लोगोंने संवेगी साधुका नाम ले करके निंदाकाकार्य किया है। इस लिये पापका पश्चात्ताप करना। स्थूलदृष्टिसे न देख करके, सूक्ष्मदृष्टिसे देखोगे तो, तुम्हें मालूम होगा कि-तुम्हारे साधुओंकी उत्कृष्टता सम्हालनेके लिये कैसे २ प्रपंचोको ऊठाते हो? बस, यही तुम्हारे गुरुओंकी शिक्षाका फल है।

प्रश्न--२२ सूर्याभदेवता जिन प्रतिमा मोक्षने अर्थ पूजी, आप केते हो, ओर रायपसेणीका पाठ बतलाते हो सो-इणरो उत्तर अवलतो ओहेके देवतांरा केणासू पूजी हे ओर भवनी परमपराने अर्थे पूजी, दुसरो बतीसवानाभी पूजीया है, हरेक देवता भीमाणरो अदपती हुवे तीको उपजती वेला पूजीया करे है जीणसू सूर्याब देवता बी पूजी परंपरा रीते, ओर आप फुरमाते होके निसेसाए सबदनो अर्थ मोक्ष है सो इणरो उत्तर ओहेके इणीज मुताबीक पाठ भगवती सूत्रमें सतक दूजें उदेशे पेले लायमांयसू धन बारे काडीयो, जठे 'नीसेसाए अणुगामीयताए भविसई' पाठ आयो छै, सो ईण जगा कांई मोक्ष हुवो दोनु जगा नीसेसाए अणुगामीयताए भविसई, एक सरीका पाठ छै, इण न्याय प्रतमा पूजी जीणमे परभोरो मोक्ष नथी.

उत्तर-"देवताके कहनेसे पूजाकी, उसमें लाभ नहीं है" ऐसे तुम्हारे कहनेसे, यह मालूम होता कि-आप लोगोंका यह मानना है कि-'दूसरेके कहनेसे, कोई मनुष्य कुछ कार्य करे उसको लाभ या नुकशान कुछ नहीं होता'। परन्तु यदि ऐसा मानोगे तो दूसरेके कहनेसे कोई संसार छोडे, दान दे, भक्ति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करे, विनय करे उसको लाभ नहीं होना चाहिये। दूसरेके कहनेसे हिंसादि कार्य करे, तो उसको नुकशान नहीं होना चाहिये। परन्तु नहीं, यह बात आप लोग भी नहीं स्वीकार सकते। तो फिर, यह विचारनेकी बात है कि देवताके कहनेसे पूजाकी है, तो कोई खराब कार्य तो नहीं किया है। उत्पन्न होनेके बाद सूर्याभदेवने स्वयं यह विचार किया कि-हमें पूर्व-पश्चात्-कल्याणकारी-हितकारी-सुखकारी-भवान्तरमें भी उपकारी-मुक्त्यर्थ क्या कार्य है? उस समयमें देवताओंने आ करके कहा है। देखिये, इस विषयका पाठः—

"तेणं कालेणं तेणं समयेणं सूरियाभदेवे अहुणोववण्णमेत्ते चेव समाणे पंचविहाए पज्जत्तिए पज्जतिभावं गच्छइ, तं जहाः- आहारपज्जत्तीए, सरीरपज्जत्तीए, इंदियपज्जत्तीए, आणपाणुपज्जत्तीए, भासामणपज्जत्तीए, तए तस्स सूरियाभस्स पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गयस्स समाणस्स, इमेआरूवे अज्जत्थिए, चिंतिए, पत्थिए, मणोगए, संकप्पे समुप्पज्जित्था, किं मे पुव्विं करणिज्जं, किं मे पच्छा करणिज्जं, किं मे पुव्विं सेयं, किं मे पच्छासेयं, किं मे पुव्विंपच्छा वि हिआए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामिअत्ताए भविस्सइ? तए तस्स सूरियाभस्स देवस्स सामा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

णिअपरिसोववण्णगा देवा सूरियाभस्स देवस्स इमे-आरुवं, अज्झत्थिअं जाव समुप्पण्णं समभिजाणित्ता जेणेव, सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छ-इत्ता सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहिअं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जयेणं विजयेणं वद्धावेंति, वद्धावित्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पियाणं सूरियाभे विमाणे सिद्धाययणं अट्ठसयं जिणप-डिमाणं जिणुस्सेहपमाणमेत्ताणं सण्णिखित्तं चिट्ठन्ति सभाए णं सुहम्माए माणवते चेइए खंभे वइरामये गोलवट्टसमुग्गए बहुओ जिणसक-हाउ सण्णिखित्ताओ चिट्ठन्ति, ताउ णं देवाणु-प्पियाणं अण्णेसिं च बहूणं वेमाणिआणं देवाणं देवीणं य अच्चणिज्जाओ जाव वंदणिज्जाओ, नमं-सणिज्जाओ, पूअणिज्जाओ, सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ, तए णं देवाणुप्पियाणं पुव्विं करणिज्जं तं देवाणुप्पियाणं पच्छा करणिज्जं तं देवाणुप्पियाणं पुव्विं सेयं, तं देवाणुप्पियाणं पच्छासेयं, तं देवाणुप्पियाणं पुव्विं पच्छा वि हिआए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अत्ताए भविस्सइ।" पृष्ठ १७१ से।

भावार्थः—जिस समय सूर्याभदेव सूर्याभ विमानमें उत्पन्न हुआ, उस समय उसको ऐसा विचार हुआ कि-मेरा पूर्व हित-पश्चात् हित् तथा पूर्वपश्चात् हित क्या है? इस प्रकार विचार करते हुए सूर्याभदेवको जान करके, उसके पास उसके सामानिक सभाके देवोंने आकरके सविनय इस प्रकार कहाः—

'हे देवानुप्रिय! सूर्याभविमानमें सिद्धायतनमें जिनोत्सेध प्रमाणमात्र १०८ जिन प्रतिमाएं हैं। तथा सुधर्मासभामें मानवत चैत्य-स्तंभमें वज्रमय गोलडब्बेमें जिनके अस्थि (दाढा वगैरह) हैं, वे आपसे तथा दूसरे अनेक देव-देविओंसे अर्चनीय, वंदनीय, नमस्यनीय, पूजनीय, सम्माननीय यावत् कल्याण-मंगल देव चैत्यकी तरह पर्युपासनीय हैं। तथा वे ही प्रतिमाएं एवं दाढाएं आपको परंपरासे पूर्वहितके लिये, पश्चात् हितके लिये, सुखके लिये, क्षमाके लिये, मोक्षके लिये होंगीं।'

उपर्युक्त पाठमें प्रत्यक्ष जिन प्रतिमा तथा दाढा (भगवान्के अस्थि वगैरह) अर्चनीय-पूजनीय-वंदनीय कहीं है। परन्तु दूसरी वस्तु दिखलाई नहीं है। इसके सिवाय आप लोग भवकी परंपराका अर्थ करते हैं, तो क्या पूजा करनेसे भवकी परंपरा बढती है, ऐसा कहना चाहते हो? या भवकी परंपरामें हितकर कहना चाहते हो?। यदि भवकी परंपरा बढे, ऐसा अर्थ करोगे, तो वह ठीक नहीं है। क्योंकि-सूर्याभदेवने प्रभुकी पूजा तथा नाटक वगैरह किये, तिसपर भी एकावतारी महाविदेह क्षेत्रमें 'दृढ प्रतिज्ञ' नाम धारण करके चारित्र लेकर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

केवली होगा। अब दिखलाइये, कहाँ रही भवकी परंपराका बढना ?। 'परित्तसंसारी' वगैरह विशेषण होनेसे भवकी परंपराका बढना बिलकुल असंभव है।

अब जिनपूजा, भवपरंपरामें हितकर है, ऐसा कहोगे, तो बस, झघडा समाप्त हुआ। आप लोग भी सूर्याभदेवकी तरह जिनपूजा रोचक हो जाओ।

अच्छा अब दूसरी बात देखिये, जैसे और वस्तुएं पूजी, वैसे जिनप्रतिमा भी पूजी, ऐसाभी तुम्हारा कथन ठीक नहींहै। क्योंकि-जिनपूजाकी तरह दूसरी वस्तुओंकी पूजाके समय 'आलोए पणामं करेइ' ऐसा कहा नहीं है। तथा जिन प्रतिमाकी तरह 'नमुत्थुणं' वगैरह कहा नहीं है। एवं हितकारी-सुखकारी-क्षेमकारी--कल्याणकारी वगैरह शब्द भी कहे नहीं हैं। तिसपर भी ३१ वस्तुओंकी पूजा तथा जिनेश्वरकी पूजाको एक समान गिनते हो, इससे उत्सूत्रभाषीपनेका दोष तुम्हारे सिरपर लगता है कि नहीं, इस बातका विचार करो।

इसके सिवाय और भी देखो, भगवतीसूत्रके १० वें शतकके छठे उद्देशेमें पृष्ट ८७६ में कहा है कि-भगवान्की दाढा वगैरहकी आशातना देवता लोग करते नहीं हैं। जब दाढाकी ही आशातना नहीं करते हैं, तो फिर प्रतिमाके लिये तो कहना ही क्या ? देखिये, वह पाठ यह है:-

"पभू णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि तुडिएणं सद्धिं दिव्वाइं भोग भोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए ? णो इणट्ठे समट्ठे।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

से केणट्ठे णं भंते ! एवं वुच्चइ णो पभू चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए जाव विहरित्तए ? अज्जो ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए माणवए चेइए खंभे वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहुओ जिणसकहाओ सण्णिखित्ताओ चिट्ठंति, जाउणं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो अण्णेसिंच बहूणं असुरकुमाराणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ वंदणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ भवंति, तेसिं पणिहाणे णो पभू से तेणट्ठेणं अज्जो ! एवं वुच्चइ णो पभू चमरे असुरिंदे असुरराया चमर चंचाए रायहाणीए जाव विहरित्तए। पभू णं अज्जो! चमरे असुरिंदे असुरराया चमर चंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठी सामाणिय साहस्सीहिं तायत्तीसाए जाव अण्णेहिं च बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महयाहय जाव भुंजमाणे विहरित्तए केवलं परियारि ट्ठीए णो चेवणं मेहुणवत्तीए।"

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थः-हे भगवन् ! चमरचंचा राजधानीमें चमरसिंहासनमें असुरेन्द्र असुरराजा चमर, दिव्य भोग भोगनेको समर्थ है?

हे गौतम ! समर्थ नहीं है।

हे भगवन् ! क्यों समर्थ नहीं है ?

हे गौतम ! चमरचंचा राजधानीमें सुधर्मा सभामें मानवत चैत्यस्तंभमें वज्रमय डब्बेमें जिनके सक्थी बहुत हैं। जो कि चंदनसे पूज्य हैं। प्रणामसे नमन करने योग्य हैं। वस्त्रादिसे सत्कार करने योग्य हैं। प्रतिपत्तिसे संमान्य हैं। अतएव वे पवित्र जिन सक्थिओंकी आशातना न हो, इस लिये वह चमरेन्द्र मैथुनादि भोगोंको भोगता नहीं है। परन्तु अपने परिवारके साथ चमरेन्द्र वहाँ विचर सकता है।

इससे स्पष्ट मालूम होता है कि-जब जिनदाढाओंकी आशातनाके लिये निषेध किया है, तो फिर जिन प्रतिमाका तो कहना ही क्या ?

अच्छा, अब तेरापंथी महानुभाव भगवतीसूत्रके दूसरे शतकके पहिले उद्देशके 'हियाए सुहाए खमाए' इत्यादि पाठको ले करके यह सिद्ध करनेकी कोशिश करते हैं कि-'सूर्याभदेवने जिन प्रतिमाकी पूजाके निमित्त जो 'हियाए' इत्यादि शब्द कहे हैं, वे संसारके लिये हैं।' परन्तु वह ठीक नहीं है। भगवतीसूत्रके दूसरे शतकके दूसरे उद्देशमें स्कंदक तापसने, महावीर स्वामीके पास एक दृष्टान्तको ले करके बातकी कि-'जैसे गाथापतिने जलते हुए अग्निसे एक बहुमूल्य पात्र (भांड) निकाला, तब विचार करता है कि-यह मुझे हितकारी-सुखकारी-कल्याणकारी तथा आगामी भवमें काम लगेगा। उसी तरह हे प्रभो ! मेरी आत्मा एक भांड जाने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पात्र रूप है। तो जरा-मरणादि जलते हुए लोकसे निस्तारित हुई मेरी आत्मा, हितकारी-सुखकारी-कल्याणकारी तथा परभवमें मुझको लाभकारी होगी।'

इत्यादि पाठसे गाथापतिके स्थानपर खुद हुआ। भांडके स्थानपर अपनी आत्माको स्थापित किया। तथा धनके स्थानपर ज्ञान-दर्शन-चारित्रको स्थापन किया। ऐसे उपमा उपमेयभाव करके उपनय उतारा है। वहाँ स्कंदकजीने आत्माको तारनेमें 'हियाए सुहाए' इत्यादि शब्द कहे हैं। उसी तरह गाथापतिके पाठमें भी 'हिआए सुहाए' इत्यादि शब्द कहे हैं। उन दोनों जगह 'निःश्रेयस' का अर्थ मोक्ष है। परन्तु गाथापतिके पक्षमें 'निःश्रेयस' शब्दका अर्थ द्रव्य मोक्ष करना और स्कन्दकजीके पक्षमें भाव मोक्ष अर्थ करना। गाथापति उस भांडके देनेसे छूट गये तथा स्कंदकजी कर्मके देनेसे छूट गये।

वैसे ही शब्द सूर्याभदेवके भी हैं। इसके सिवाय जहाँ सूर्याभदेव, महावीर स्वामीको वंदणा करनेको गये, वहाँ भी 'हियाए' इत्यादि पाठ कहा है। उववाई सूत्रके पृष्ठ १६ में, ठाणांगजीके पृष्ठ १९४ में इत्यादि कई जगहाँ पर 'हियाए' इत्यादि पाठ शुभ कार्योंमें आया हुआ है। अत एव प्रतिमा पूजा भवान्तरमें सुखकारी है, यह बात अच्छी तरह सिद्ध हो जाती है।

प्रतिमा पूजा करके सिधा मोक्ष नहीं होता है, ऐसा जो तुम (तेरापंथी) कहते हो, इसीसे ही प्रतिमाकी पूजाका स्वीकार हो जाता है। अब रही सीधे मोक्षकी बात। सो तो ठीक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

है। सीधा मोक्ष नहीं होता है, यह तो हम भी स्वीकार करते हैं। क्यों कि, देखिये, श्रावक पांचवे गुणस्थानकमें होनेसे बारहवे देवलोक पर्यन्त ही जा सकते हैं। और प्रतिमाकी द्रव्य पूजा करनेका अधिकार श्रावकोंका ही है। अत एव सीधा मोक्षका होना कहाँ रहा? हम पूछते हैं कि-पांचवा गुणस्थानक-वाला श्रावक सामायिक-पौषध वगैरह करता है, तो इससे उसका सीधा मोक्ष तुम मानते हो? जब उसका नहीं हो सकता है, तो फिर प्रतिमाकी पूजा करने वालेका क्यों कर हो सकता है?। इसमें कारण यह है कि-अकेले विनयसे, अकेले विवेकसे, अकेले ज्ञानसे, अकेले दर्शनसे तथा अकेले चारित्रसे भी सीधा मोक्ष नहीं हो सकता। परन्तु जिस निमित्तको ले करके सम्यक्त्व दृढ हुआ हो, वह मुक्तिका कारण गिना जाता है। फिर भले ही परंपरासे मुक्ति क्यों न हो?। आर्द्रकुमारको प्रतिमाके दर्शनसे समकित हुआ, ऐसा सूयगडांगसूत्रकी निर्युक्तिमें स्पष्ट पाठ है। निर्युक्तिको माननेका प्रमाण नंदीसूत्र तथा भगवतीसूत्रके पचीसवे शतकमें पाठ है, जो पाठ प्रश्नोंके उपक्रममे देदिया है।

जिससे परंपरासे मुक्ति हो, ऐसे विनय-विवेक-ज्ञान दर्शन-चारित्र इत्यादि भी प्रमाण ही है। ज्ञान-दर्शन-चारित्र ये तीनोंके संयोगमें साक्षात् मुक्ति होती है। दर्शनकी निर्मलता भगवान्की आज्ञामें है। भगवान्ने प्रतिदिन प्रभुप्रतिमाके दर्शन नहीं करनेवाले साधु तथा श्रावकोंको प्रायश्चित्त दिखलाया है। देखिये, नंदिसूत्रमें जिन महाकल्पसूत्रका नाम है, उसी महाकल्पसूत्रमें इस तरहका पाठ है:-

"से भयवं तहारूवं समणं वा माहणं वा चेइ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अघरे गच्छेजा ? हंता गोयमा ! दिणे दिणे गच्छेजा। से भयवं जत्थ दिणे ण गच्छेजा, तओ किं पायच्छित्तं हवेज्जा ? गोयमा ! पमायं पडुच्च तहारूवं समणं वा माहणं वा जो जिणधरं न गच्छेज्जा तओ छट्ठं अहवा दुवालसमं पायच्छित्तं हवेज्जा।"

अर्थात्—हे भगवन् ! किसी जीवको दुःखित नहीं करनेवाला तथारूप श्रमण जिनमंदिरमें जाय ?

हे गौतम ! हमेशां-प्रतिदिन जाय।

हे भगवन् ! यदी वह हमेशां न जाय तो इससे, उसको प्रायश्चित्त लगे ?

हे गौतम ? यदि प्रमादका अवलंबन करके तथारूप श्रमण जिनमंदिरमें प्रतिदिन न जाय तो, उसको छट्ठ (दो उपवास) अथवा द्वादश (पांच उपवास) का प्रायश्चित्त लगे।

पाठक देख सकते हैं कि-उपर्युक्त पाठमें खुद भगवान्ने जिनप्रतिमाके प्रतिदिन दर्शन करनेका कैसा हूकम फरमाया है?। जो लोग जिनमूर्तिके दर्शन नहीं करते हैं, वे भगवान्की आज्ञाके विराधक हैं, ऐसा कहनेमें क्या किसी भी प्रकारकी अत्युक्ति कही जा सकती है ?। कदापि नहीं।

प्रश्न—२३ समेगीजी साधुजी महाराज खुद ध्रवपूजा कीउ नही करते, जो ध्रवपूजामें धर्म हो तो साधुको अवस्य करणा चाईयें साधुकू धर्मका कांम करणेमें कोई दोस नही है, खास धर्मके वास्ते गर छोडते सो उनको तो हरबर्ग जीन प्रतिमाकी ध्रवपूजा वो भगतीमे रेणा चायै कीउके आप प्रतिमा पूजणेमे धर्म परूपते है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उत्तर—बडे आश्चर्यकी बात है कि--प्रश्न पूछनेवालोंको यह भी समझमें नहीं आया की-द्रव्यपूजा करनेमें द्रव्यकी जरूरत होती है या नहीं। और जिसमें द्रव्यकी जरूरत रहती है, वह साधु कैसे कर सकता है? फिर चाहे भले धर्मका ही हो। जिस कार्यमें द्रव्यकी आवश्यक्ता होती है, वह कार्य साधु नहीं कर सकते। क्योंकि, साधुके पास द्रव्यका अभाव ही रहता है। इसके सिवाय द्रव्यपूजा करने वालेको स्नानादि क्रिया करनेकी जरूरत रहती है। देखिये, भगवती सूत्रमें तुंगिया नगरीके श्रावक स्नान-पूजा करके भगवान्को वंदणा करनेको गये। वहाँ पूजाके समय स्नान क्रियाकी जरूरत पडी। जब साधुको स्नान करनेका, पुष्पादिको छूनेका अधिकार ही नहीं है, तो फिर कैसे प्रभुकी द्रव्यपूजा कर सकते हैं?। प्रभुकी पूजामें पुष्पादि सचित्त वस्तुओंका उपयोग करना पडता है। देखिये, महाकल्प-सूत्रका वह पाठ, जो पाहिले प्रश्नके उत्तरमें दे दिया है। व्रत-धारी श्रावकोंने प्रभुकी पूजा करते हुए कैसी २ वस्तुएं चढाई हैं? साधुओंका अधिकार वैसी वस्तुओंको छूनेका ही नहीं है। जिसका जैसा अधिकार होता है, उससे वैसी ही क्रियाएं होतीहैं।

एक स्वाभाविक नियमको देखिये, जिसको जिस जगह फोडा होता है, वह उसी जगह पाटा बांधेगा। निरोग शरीर पर पाटा बांधनेकी आवश्यक्ता नहीं रहती। वैसे मुनिओंको छकायका कूटा बाकी नही हैं, इस लिये उनको द्रव्यपूजा करनेकी जरूरत नहीं।

'धर्मके करनेमें कोई दोष नहीं है, खास धर्मके लिये घर छोडते हो' यह तुम्हारा (तेरापंथियोंका) कथन तुम्हारी अज्ञानताका परिचय दे रहा है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रतिमा पूजनेमें धर्म हम ही नहीं कहते हैं, समस्त तीर्थंकर, गणधर, आचार्य, उपाध्याय तथा मुनिप्रवर कहते हैं। जब ऐसा ही है, तब तो तुम्हारे हिसाबसे उन सभीको, द्रव्यपूजा करनी कार्यरूप हो जायगी, परन्तु नहीं, वैसा नहीं है। ऊपर कहे मुताबिक जितने पदस्थ अथवा मुनिपद धारक हैं, उनको द्रव्यपूजाका अधिकार नहीं है। भावपूजा याने जो भक्ति है, वही करनेका अधिकार है। देखिये, प्रश्नव्याकरणके पृष्ठ ४१५ में इस तरहका पाठ है:—

"अह केरिसए पुणाइ आराहए वयमिणं? जे से उवहिभत्तपाणादाणसंगहणकुसले अच्चंतबालदुव्वलगिलाणवुड्ढमासखमणे पवत्तायरिय उवज्झाए सेहे साहम्मिए तवस्सीकुलगणसंघ चेइअट्ठे निज्जरट्ठी वेयावच्च अणिस्सिअं दस विय बहुविहं करेइ।"

उपर्युक्त पाठमें 'जिन प्रतिमाकी भक्ति करता हुआ साधु निर्जराको करे' ऐसा कहा है। उस नियमानुसार हम लोग यथाशक्ति प्रभुभक्तिका लाभ लेते हैं। जीवाभिगममें विजयदेवने प्रभुप्रतिमाके आगे १०८ काव्य करके प्रभुकी स्तुति की है। देखिये, वह पाठ पृष्ठ १९१ वे में इस तरह है:—

"जिणवराणं अट्ठसय विसुद्धगंथजुत्तेहिं महाचित्तेहिं अत्थजुत्तेहिं अपुणरुत्तेहिं संथुणइ संथुणइत्ता सत्तट्ठपयाइं उसरइ उसरइत्ता वामं जाणुं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अंचेइ, अंचेइत्ता दाहिणजाणुं धरणितलंसि नि-
हाडेइ"

उपर्युक्त पाठमें, 'पहिले काव्य कह करके सात-आठ कदम जिनप्रतिमासे पीछे हठ करके, डाबा गोडा ऊंचा करके तथा जीमणा धरणीतलमें स्थापन रकके बहुमानके साथ शक्रस्तव कह करके बंदणा करे,' इत्यादि कहा है।

उसी तरह वर्तमानकालमें भी मुनिराज, मधुर-सुंदर-नये नये वृत्तवाले काव्य प्रभुके सामने कह करके चैत्यवंदन करते हैं। इस लिये याद रखना चाहिये कि-साधुओंका अधिकार भक्ति करनेका है। द्रव्यपूजा करनेका नहीं।

इसके सिवाय और भी बहुतसे ऐसे कार्य होते हैं कि-जो धर्मके होनेपर भी साधु करते नहीं हैं। क्यों कि-वह उनका अधिकार नहीं है।

देखिये, साधु सूत्रानुसार दानधर्मका उपदेश देते हैं। किन्तु दान देते नहीं हैं। क्यों कि-उस प्रकारके अशनादिकी सामग्री उनके पास नहीं होती। ढाई द्वीपमें जितने मुनिवर हैं, वे समस्त वंदनीय हैं। तथापि शिष्योंको तथा लघु गुरुभाईओं-को एवं दूसरे छोटे साधुओंको वंदणा करते नहीं हैं। क्यों कि-व्यवहारसे वैसा अधिकार नहीं है। जहाँ जहाँ जैसा अधिकार होता है, वहाँ वहाँ वैसा ही कार्य करना उचित है।

प्रिय पाठक। तेरापंथीओंके पूछे हुए तेइस प्रश्नोंके उत्तर समाप्त हुए। उनके पूछे हुए प्रश्न कैसे अशुद्ध तथा नि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मौल्य ये, पाठक अच्छि तरह देख गये हैं । अस्तु ! जब हम तेरापंथीयोंके अभिनिवेशकी तरफ ख्याल करते हैं, तब हमें यही विश्वास होता है कि-इतना परीश्रम करनेपर भी उन लोगोंको कुछ भी लाभ होनेवाला नहीं है । और यदि हो जाय तो बडे सौभाग्यकी बात है । खैर, ऊनको लाभ हो चाहे न हो, परन्तु इतर लोगोंको इससे अवश्य लाभ पहूँचा होगा और पहूँचेगा, यह हमे दृढ विश्वास है । बस, इसीमें हम अपने परीश्रमकी सफलता मानते हैं ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पालीके तेरापंथीयोंकी एक और करतूत।

संसारमें ऐसी कहावत है कि-'सौ मूर्खोंसे एक विद्वान् अच्छा, जो तत्त्वकी बात या युक्तिको समझ भी तो ले।' हमारे पवित्र जैन धर्मको कलंकित करनेवाले श्वेताम्बर तेरापंथी भाई शास्त्रकी गंधको भी तो जानते ही नहीं है, और जहाँ तहाँ विद्वानोंके साथ शास्त्रार्थ करनेको या प्रश्नोत्तर करनेको खडे हो जाते हैं। अस्तु, लेकिन तारीफ तो इस बातकी है कि-इन लोगों को चाहे कितनेही शास्त्रोंके पाठोंसे तथा युक्तियोंसे समझावें, परन्तु ये अपने पकडे हुए पूँछको कभी छोडते ही नहीं हैं। ऐसे आदमियोंसे शास्त्रार्थ करना या वादानुवादमें उतरना क्या है, मानो अपने अमूल्य समयपर छुरी फिराना है। झूठ बोलना असत्य बातोंको प्रकट करना-समझने पर भी अपनी बातको नहीं छोडना और झूठा शोर मचाना, इत्यादि बातोंकी, इन लोगोंने अपने गुरुओंसे ऐसी उमदा तालीम ली हुइ है, कि-मानो इन बातोंके ये प्रोफेसर ही बन बैठे हैं।

अभी इन्हीं दिनोंमें-पाली मारवाडमें हमारे परमपूज्य-प्रातःस्मरणीय आचार्य महाराजके साथ, वहाँके तेरापंथियोंने जो चर्चा की थी, उसका सारा वृतान्त इस पुस्तकमें पाठक पढ चुके हैं। और इन लोगोंने जो तेईस प्रश्नोंका एक चिट्ठा लिख करके दियाथा, उनके उत्तर भी इसमें अच्छी तरह दे दिये हैं। जिस समय, उन्होंने प्रश्न दिये, थे, उस समय सबके समक्ष यह निश्चय हुआ था कि-इन प्रश्नोंके उत्तर अखबारके द्वारा दिये जायेंगे। इस नियमानुसार उन प्रश्नोंके उत्तर भावनगरके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'जैन शासन' नामक अखबारमेंभी छपवाए गये। इनके प्रश्नोंके उत्तर 'जैन शासन'में समाप्त होनेही नहीं पाये, कि इतनेमें इन तेरापंथियोंने एक आठ-नव पन्नेका ट्रेक्ट निकाल डाला। यह ट्रेक्ट क्या निकाला? मानो इन्होंने अपने आपसे अपनी मूर्खताकी मूर्ति खडी कर दी। जिनको भाषा लिखनेकी भी तमीज नहीं है, वे क्या समझ करके ऐसे ट्रेक्ट निकालते होंगे? अस्तु, भाषाकी और ख्याल न करके विषयपर दृष्टिपात करते हैं, तो इसमें मृषावादसे भरी हुइ बातोंकाही उल्लेख देखनेमें आता है। जो बातें चर्चाके समयमें हूई थीं, उनको उडा करके नई नई बातें दिखानेका जादू प्रयोग खूब ही किया गया है। लेकिन इन लोगोंको स्मरणमें रखना चाहिये कि-तुम्हारी ऐसी झूठी बातोंसे लोग फँसनेवाले नहीं है। पचासों आदमियोंके सामने जो बातें हुई थीं, उनको उडादेनेसे तुम्हारी अज्ञानताकी पूँजीही दिखाई देती है। अब आप लोग चाहे जितनी चलाकी करो, कुछ चलनेवाली नहीं है। तुम्हारे इस ८ पन्नेके ट्रेक्टमें, तेईस प्रश्न भाषासुधार करके प्रकाशित किये हैं। परन्तु हमारे पास तुम्हारा वह लंबा-चौडा चिट्ठा मौजूद है, जिसमें मारवाडी, हिन्दी, गुजराती, फारसी, उर्दु वगैरह भाषाओंकी खीचडी बना करके प्रश्न पूछे हैं। इसके सिवाय इस ट्रेक्टमें, आचार्य महाराजका पालीमें धूमधामसे सामेला हुआ, आचार्य महाराजने लेक्चर दिये, इत्यादि बातोंमें जो तुम्हारे हृदयकी ज्वाला प्रकटकी है, वह भी तुम्हारे द्वेष देवताके ही दर्शन कराती है। परमात्माका सामेला (सामैया) किस प्रकारसे होता था? उस समयके लोग शासनके प्रभावनाके लिये कैसे २ कार्य करते थे? उन बातोंको शास्त्रमें देखा। फिर तु-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

म्हे मालूम हो जायगा, कि-इस कालकी अपेक्षा धुरंधर आचार्योंका-पवित्र मुनिराजोंका सामेला (सामैया) गामके मुताबिक हों तो इसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है ? क्या मुनिराजोंको खोजेके मुडदेकी तरह शेहरमें लाना अच्छा समझते हो ? यदि ऐसाही है, तो यह बात आप लोगोंको ही मुबारक रहे। खुशीसे तुम्हारे साधुओंको उस मुताबिक ले जाया करो।

इन लोगोंके इस ट्रेक्टसे विदित होता है कि-यह ट्रेक्ट इन लोगोंने सिर्फ सच्ची बातको उडा देनेके लिये ही निकाला है। अगर ऐसा न होता तो वे इसमें इतनी असत्यपूर्ण बातें कभी न लिखते। चर्चाके विषयमें उन्होंने जो वृत्तान्त लिखा है, वह असत्यतासें भरा हुआ है। भवका डर रखनेवाला पुरुष कभी ऐसी उटपटांग झूठी बातें प्रकाशित नहीं कर सकता।

शिरेमल श्रावकके साथमें, आचार्यमहाराजके वार्तालाप होनेकी बात ८-९ पृष्ठमें लिखी है, वह भी ऐसी ही झूठी है। शिरेमलसे ऐसी बात कभी नहीं हुई है। इस बातकी साक्षी-गवाही पंडित परमानन्दजी वगैरह वेही महानुभाव देसकते हैं, जो उस चर्चाके समय हरवख्त उपस्थित रहा करते थे।

पालीके तेरापंथीभाई, अपने ट्रेक्टके १६ वे पृष्ठमें लिखते हैं कि-"उपरोक्त तेवीस प्रश्न **मारवाडी भाषा मिश्रित** लिखकर....दिये।" हम पूछते हैं कि-यह मारवाडी भाषाकी **मिश्री** डाली किसमें ? प्रधान एक भाषा भी तो होनी चाहिये। तुम्हारे प्रश्नोंमें खास एक भाषा तो कोई है नहीं। छप्पनमसालेकी दाल जैसे बनावे, वैसे ही बिचारे तेईस प्रश्नोंकी मट्टी खराब की है। अच्छा, यह भी कुछ कह सकते हो कि-मारवाडी भाषाकी मिश्री किस लिये डाली ?।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आगे चलकर उसी १६ वे पृष्ठमें लिखा गया है कि–'पालीमें करीब १५ दिनके और ठहरे रहे, कोई विहार नहीं किया, और न प्रश्नोंका उत्तर दिया।'

प्रश्नोंके उत्तर तय्यार करके 'जैन शासन' में क्रमशः छापनेके लिये भेज भी दिये थे। क्यों कि अखबारके द्वारा ही जवाब देनेका निश्चय किया था। तिस पर भी, उन लोगोंको यह कहला भेजा कि–"अगर तुम्हें जल्दी जवाब चाहिये तो, एक पब्लिक सभा करो, जिसमें पालीके प्रतिष्ठित पंडित तथा राज्यके अमलदार लोग मध्यस्थ बनाए जाँय, और हमारे आचार्यमहाराजश्री तुम्हारे तेईस प्रश्नोंके उत्तर दे दें।" लेकिन इन लोगोंने सभा करनेसे बिलकुल इन्कार किया। इस विषयमें उनके आए हुए रजिस्टर पत्र हमारे पास मौजूद हैं।

अन्तमें इतना ही कहना काफी है कि–इन लोगोंने, अपने ट्रेक्टमें मृषावादकी मात्रासे भरी हुई बातें प्रकाशित की हैं। इस लिये इनके ऊपर किसीको विश्वास नहीं रखना चाहिये। इन लोगोंका यह स्वभाव ही है कि–झूठी २ बातोंको प्रकाशित करके अपने ढाँचेको खडा रखना। परन्तु स्मरणमें रखना चाहिये कि–निर्मूल सो निर्मूल ही है। और निर्मूल वस्तु कभी ठहर नहीं सकती। अस्तु, इस विषयको अब यहाँ ही समाप्त किया जाता है। आशा है ये लोग बुद्धिमत्तासे विचार करके तत्त्वकी बातको ग्रहण करेंगे।

—o—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तेरापंथियोंसे प्रश्न.

अब हम इस पुस्तककी पूर्णाहुतिमें समस्त तेरापंथियोंसे निम्न लिखित प्रश्न पूछते हैं। आशा है कि-वे, इन प्रश्नोंके उत्तर, उनके माने हुए बत्तीससूत्रोंके मूल पाठसे ही देंगे।

१ 'श्वेताम्बर तेरापंथी' ऐसा कहनेमें तुम्हारे पासमें शास्त्रीय क्या प्रमाण है? जो प्रमाण होवे सो दिखलाओ। अगर श्वेतवस्त्र धारण करनेसे ही श्वेताम्बर होनेका दावा रखते हो, तो ऐसे तो दादु पंथी वगैरह जो २ श्वेतवस्त्र रखते हैं, वे सभी श्वेताम्बर कहे जा सकते हैं।

२ इतिहाससे तुम्हारे मतको प्राचीन सिद्ध कर सकते हो? अगर कर सकते हो तो कर दिखलाओ।

३ 'बत्तीस ही सूत्रमानने, अधिक नहीं,' यह बात कौनसे सूत्रमें लिखी है?। तथा तुम्हारे माने हुए बत्तीस सूत्रमें, दुसरे जिन २ सूत्रोंके नाम आवें, उन २ सूत्रोंको क्यों नहीं मानना?

४ 'महावीर स्वामी चूके' ऐसा अपने आपसे कहते हो? या किसी सूत्रमें भी कहा है? सूत्रमें कहा हो तो, उस सूत्रके नामके साथ पाठ दिखलाओ।

५ सालमें दो दफे पाटमहोत्सव करते हो, यह विधि कोनसे सूत्रमें लिखी है?

६ तुम्हारे साधु दो-ढाई हाथका आधा रखते हैं, यह किस सूत्रके कौनसे पाठके आधारसे रखते हैं?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

७ तुम्हारे पूज्यके पाट-पट्टे साध्वियाँ बिछाती हैं, यह कौन जैनसूत्रके आधारसे ?

८ तुम्हारे साधु, साध्वियोंके पास गोचरी मँगवाकर आहार करते हैं, यह कौनसे सूत्रके आधारसे ?

९ तुम्हारे साधु, हलवाईयोंकी कडाइ वगैरहके धोए हुए, गृहस्थोंके रसोईके बलतणोंके धोए हुए पानीको, जिसमें असंख्य जीव उत्पन्न हुए होते हैं, पीते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?

१० तुम्हारे साधु, अनारके दाने वगैरह सचित्त फलोंको खाते हैं यह किस सूत्रके आधारसे ? ।

११ तुम्हारे साधु, विहारमें गाँव २ साध्वियोंको साथ रखते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?

१२ तेरापंथी साधु, गृहस्थोंके बालकोंको विद्या पढानेसे रोकते हैं, इसका क्या कारण है ? ।

१३ तुम्हारे साधु, गृहस्थोंको इस प्रकारकी बाधा देते हैं कि-'हमारे सिवाय दूसरे साधुओंको आहार-पानी न देना' यह किस सूत्रके आधारसे ? ।

१४ तुम्हारे साधु, रात्रिको पानी नहीं रखते हैं, तो फिर कभी बडीनिति (जंगल) जाना पडे, तो अशुद्ध जगहको साफ कैसे करते हैं ? अगर कहोगे कि-मूत्रसे साफ करते हैं, तो ऐसा करना किस सूत्रमें कहा है ? ।

१५ तुम्हारे साधु, गृहस्थोंका झूठा आहार तथा झूठा पानी ले करके खाते-पीते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ? ।

१६ तुम्हारे साधु, रात्रिके दस २ बजे तक गृहस्थनियों-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को उपदेश देते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?।

१७ तुम्हारे साधु स्थानकमें लाई हुई वस्तुको ग्रहण करते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?।

१८ खानेकी वस्तुएं रात्रिको रखना, यह साधुके लिये कीस सूत्रमें कहा है ?।

१९ दुःखी जीवको, दुःखसे मुक्त नहीं करना, ऐसा कीस सूत्रमें कहा है ?।

२० जीवको मारनेमें एक पाप और छुडानेमें अढारह पाप लगता है, ऐसा किस सूत्रमें कहा है ?।

२१ तुम्हारे किसी साधुकी आँखोका तेज कम होजाय, तो वह चसमा रक्खे या नहीं ? अगर नहीं रक्खेगा तो जीव-दया कैसे पालेगा ?। चसमा नहीं रखना, ऐसा किस सूत्रमें कहा है ?।

२२ तुम्हारे साधु, निरन्तर मूँहपर कपडा बाँधे रहते हैं, हैं, इसका क्या कारण है ? इस तरह मूँह छिपा रखनेकी किस सूत्रमें आज्ञा दी है ?।

२३ मूँहपत्तिमें दोरा रखनेका किस सूत्रमें फरमाया है ?

२४ कुष्टेका गद्दी-तकिया जैसा बना करके, ऐश-आराम करना, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

२५ रात्रिके पडे हुए कपडोंकी पडिलेहणा साध्वियोंसे करानी, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

२६ साध्वियोंको पडदेके अन्दर लेजाकरके आहार करना, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

२७ प्रातःकालमें ऊठ करके, साधुओंने मक्खन तथा मिश्रि खाना, यह किस सूत्रका फरमान है ?।

२८ साधु होकरके दिनभर चीकनी सुपारी खाया करना, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

२९ पुस्तकादिका बोझा साध्वियोंसे उठवाना, यह किस सूत्रमें कहा हैं ?

३० हाथ पैर साध्वियोंसे धुलवाना, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

३१ गृहस्थानियोंके साथ, एकान्तमें बातें करना, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?

३२ तुम्हारे साधु, अपने दरशन करनेकी, गृहस्थों को बाधा देते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे देते हैं ?।

३३ तुम्हारे साधु, पोथी पुस्तक रखते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

३४ तुम्हारे साधु, पात्रको रंग-रोगान लगाकर रंग-बिरंग बनाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

३५ तुम्हारे साधु, एक मासस अधिक रहते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

३६ महाजन (बनीया) के सिवाय दीक्षा नहीं देना, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

३७ तुम्हारे साधु, दो दो महीने पहिलेसे चौमासा करनेको कह देते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

३८ तुम्हारे साधु, दवाई ले करके उसकी फीस गृहस्थोंसे दिलवा देते हैं, यह किस सूत्रके आधारसे ?।

३९ ओसवालके सिवाय, और किसीको पूज्य नहीं बनाते, यह किस सूत्रके आधारसे ?।

४० तुम्हारे साधु, भिक्षाके समय पहिलेसे गली-महुल्लोंको सूचना करवा देते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

४१ साध्वियोंसे सूत्र बचवाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

४२ साधु, होकरके किंवाड खोले या गृहस्थोंसे खूलवावे और उसके अन्दरकी वस्तु ग्रहण करे, यह किस सूत्रकी आज्ञासे?।

४३ तुम्हारे साधु, अंधेरेमें ही (४-५ बजे) गृहस्थनियोंसे वंदणा करवाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

४४ तुम्हारे साधु, गृहस्थनियोंसे दिनमें भी सेवा करवाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

४५ तुम्हारे साधु, सुतकवालेके घर जा करके दर्शन देते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

४६ तुम्हारे साधु, गृहस्थके घर जा करके व्याख्यान सूनाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे सुनाते हैं ?।

४७ तुम्हारे साधु, एक ही घरसे जी चाहे उतनी रोटी उठाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ?।

४८ तुम्हारे साधु, तीसरे दिनका नियम करके गृहस्थके घरसे आहार लेते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

४९ तुम्हारे पूज्य, अपने कपडे साध्वियाँसे सिलाते हैं, ओघा बनवाते हैं, कपडें धुलवाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है?।

५० साध्वियोंको बजारमें दो दुकानोंके बीचमें चौमासा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मासकल्प कराते हो, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ? ।

५१ तुम्हारी साध्वियें पाट-पट्टेके ऊपर बैठकर पर्षदाके बीचमें व्याख्यान देतीं हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ? ।

५२ तुम्हारे मृत साधुको १ मुहूर्त अपनी निश्रामें रखते हैं. गृहस्थोंसें वंदणा करवाते हैं, मृतसाधु, बडी दीक्षावाला हो तो छोटी दीक्षावाला साधु, उसको बंदणा करता है, यह सब विधि किस सूत्रमें कही है ? ।

५३ 'भीखमजी, पांचवे देवलोकके ब्रह्म नामक इन्द्र हुए' ऐसे कहते हो, तो यह बात किस सूत्रमें कही है ? ।

५४ तुम्हारे साधु, पुस्तक बनाकरके छपवाते हैं, वह किस सूत्रकी आज्ञासे ? ।

५५ साधुओंके लिये, सूत्रमोल लेते हो, और साधुओंको देतेहो यह किस सूत्रकी आज्ञा है ? ।

५६ तुम्हारे साधुओंको खानेका सामान ऊंटपर लाद लाद करके लेजाते हो, सामने जाकरके साधुओंको आहार देते हो, यह किस सूत्रकी आज्ञासे ? ।

५७ तुम्हारे साधु, आधाकर्मी आहारको लेते हैं, जब तुम्हारे पूज्यको बंदणा करनेको जाते हो, तब नानाप्रकारकी चीजें बनाकर बेहराते हो, यह किस सूत्रकी आज्ञासे करते हो ?।

५८ जिस समय तुम्हारे पूज्यको बंदणा करनेको जाते हो, तब मिश्री-घेवर-लड्डु वगैरह बाँटते हो, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ? ।

५९ जब तुम्हारे पूज्यको बंदणा करनेको जाते हो, तब सगे-संबन्धियोंको जिमाते हो-आरंभ समारंभके कार्य करते हो, इसका दोष तुम्हारे पूज्यको लगता है कि नहीं ? अगर नहीं लगता है तो सूत्रका पाठ दिखलाओ ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

६० तुम्हारे पूज्यको वंदणा करनेको जाते हो, तब वहीं लडके-लडकियाँको देख करके आपसमें सगाई करते हो, तो इसका दोष तुम्हारे पूज्यको क्यों न लगना चाहिये ?

६१ तुम्हारे साधुओंके मलिन कपडोंमें जब जू पडतीं हैं, तब वे निकाल निकाल करके पैरोंमें पाटे बाँध करके उसमें रखते हैं, तो ऐसा करनेको किस सूत्रमें कहा है ?।

६२ तुम्हारे साधु उष्णकालमें कोरी हांडीमें पानी ठंढा करके पीते हैं, यह कीस सूत्रकी आज्ञासे ?।

६३ जिन मंदिरस्वामिके सामने आप लोग क्रिया करते हो, उन मंदिरस्वामिका नाम, तुम्हारे माने हुए बत्तीस सूत्रमेंसे कौनसे सूत्रमें है ?।

६४ तुम्हारे साधु, स्याही-कलम-कागज पासमें रखते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

६५ तुम्हारे साधु, तीन २ पात्र रखते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

६६ तुम्हारे साधु, गृहस्थका बुलाना आनेसे फोरन पात्र उठाकरके जाते हैं और आहार ले आते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

६७ तुम्हारे साधु, अपने पास बैठ करके सामायक कर नेकी बाधा देते हैं, यह किस सूत्रमें कहा है ?।

६८ तुम्हारे मतके उत्पादक भीखुनजी किस गण-कुल संघ (गच्छ) में हुए हैं, यह प्रमाणके साथ दिखलाओ।

६९ भगवान्‌को चूके कहते हो, वह अपने आपसे कहते हो या किसी सूत्रके आधारसे कहते हो ?।

७० तुम्हारे साधु, स्त्री-पुरुषके इत्यादि अनेक प्रकारके चित्र रंगी-बिरंगी अपने हाथोंसे लिख करके पानासे पुंठा भरते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

७१ तुम्हारे साधु-साध्वि रात्रिके दश-दश-ग्यारह बजे तक चिल्ला २ करके ऊंच स्वरसे गाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

७२ तुम्हारे साधु, एक दिन गृहस्थके घरके भीतरके चोकमेंसे आहार ले, दूसरे दिन, उसी घरके बाहरके चौकमेंसे आहार ले, यह सब विधि किस सूत्रमें दिखलाई है ?।

७३ तुम्हारे साधु, कच्चा जल पशुका झूठा किया हुआ लेवे हैं, यह किस सूत्रके फरमानसे लेते हैं ?।

७४ तुम्हारे साधु, जब ठंडिल (जंगल) जाते हैं, तब अनेकों श्रावक 'खमा,' 'घणीखमा'का चिल्लाहट करते हुए साथ जाते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञा है ?।

७५ तुम्हारे साधु, राखका पानी पीते हैं, यह किस सूत्रकी आज्ञासे पीते हैं ?।

सूचना—तेरापंथी-मतानुयायी महाशयोंको सूचना की जाती है, कि-हमारे इन ७५ प्रश्नके उत्तर, तुम्हारे माने हुए ३२ सूत्रके मूल पाठसे ही मिलने चाहिये। क्योंकि-आप लोग ३२ के उपरान्त न कोई सूत्र मानते हैं और न टीका-भाष्य-निर्यक्ति वगैरह मानते हैं,। उपर्युक्त प्रश्नोंके उत्तर सूत्रों-के पाठ-पृष्ठ वैगरहके साथ सममाण लिखना।

इति शम्।

समाप्त.

007295

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com